Digitized by eGangotri

Cheel chhad

छेड़-छाड़

(शिष्ट-हास्यात्मक पद्य-संग्रह)

रचयिता—
हृषीकेश चतुर्वेदी
Hreshee Kash chaturvedee

SPS
891.431 H 86 CH
19704

प्रकाशक—
रत्नदीप प्रकाशन
चौबेजी का कटरा, किनारी बाज़ार,
आगरा
Ratndeep prakashan
Agra

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

Rajeev

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

प्रकाशक—

सतीशचन्द्र चतुर्वेदी 'प्रेमी'

अध्यक्ष—रत्नदीप प्रकाशन

चौबेजी का फाटक, किनारीबाज़ार,

आगरा।

19704
Rs 1.75
@ 4.1.1958

प्रथमबार :

पौष कृष्णा ३ संवत २०१३ वि० (दिनाङ्क २०-१२-५६)

मूल्य : १||।)

Sri Pratap Singh
Library
Srinagar.

मुद्रक—

नेमीचन्द जैन,

महावीर प्रेस, आगरा।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

छेड़-छाड़ किन से ?—

(विषय-सूची)

विषय	शीर्षक	पृष्ठ
(१) असावधान 'मुद्रकों' से—		
	(१) 'प्रेस के भूत'	१
(२) 'शोषक वर्ग से'—		
	(२) 'लाला'-लीला	२
(३) कन्या-पक्ष के 'रक्त-चोषक' 'वर-पक्ष' वालों से—		
	(३) बरात, या डाका ?	६
(४) कवित्व और पत्रकारिता का स्तर गिराने वालों से—		
	(४) कवि और पत्रकार	१०
(५) स्वयं को महाकवि समझने वालों से—		
	(५) गवैया कवि	१३
	(६) 'महाकवि' से	१६
	(७) कविराज	१८
	(८) कहें, या न कहें	२३
	(९) कवि-सम्मेलन	२८
(६) 'कवि-सम्मेलनों' को मनोरंजन-मात्र का साधन समझने वालों से—		
	❀ (१०) समय की-सी	३४
(७) अ-रसिक श्रोताओं से—		
	(११) अमूल्य मन्त्रणा	३६

❀ कवियों को सम्बोधन करके।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

(८) 'हाला' वादी बन्धुओं से—

(१२) भङ्ग का लोटा ३८

(९) विविध वर्गों से—

(१३) आप विश्वास करें ५०

(१४) वानरो वा, नरो वा ५४

(१०) नेताओं का छद्म-वेष धारण करने वाले 'बगुला-भगत' स्वार्थ-साधकों से—

(१५) सब गुन-भरे ५५

(१६) 'मत' दान ५६

(१७) 'मत'-दान के मतवाले ५८

(१८) अनवकाशी 'नेता' ५९

(११) 'शोषक'-वग से (पुनः)—

(१९) शोषण का भूत ६०

(१२) असावधान 'भूमिधरों' से—

(२०) उन्मुक्त किसान ६१

(१३) छात्र-वेषधारी उच्छृङ्खल निरक्षर व्यक्तियों से—

(२१) अछात्र 'छात्र' ६३

(१४) 'दास'-वेष से अब तक चिपके-हुए शिष्ट-लोगों से—

* (२२) लीजिये, यह हुआ ! ६४

(१५) 'प्रगति-पन्थ' के भेड़-चाली पथिकों से—

(२३) प्रगति-युग की पुकार ६७

(२४) 'वैज्ञानिक' से ६८

---

* अँग्रेज़ों को सम्बोधन करके।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

(१६) भगवान् की सर्वव्यापकता को कहने, किन्तु न समझने वालों से—

(२५) मुझे हँसी आती है ७१

(१७) सहानुभूति का स्वाँग दिखाने वालों से—

(२६) विपत्ति की बड़ी बहन ७२

(१८) स्वास्थ्य की उपेक्षा करने वालों से—

(२७) स्वास्थ्य-चर्चा ! ७४

(१९) अपने भगवान (श्रीकृष्ण) से—

(२८) चित्त-चोर से ७६

(२९) ऐंड़े पर पकड़े गये ! ७७

(२०) विविध लोगों से—

(३०) समझ में नहीं आता ७८

(३१) झूठा सत्य ! ,,

(३२) कैसे मानें ७९

(३३) सच्ची बात ,,

(३४) चटनी ८०

(२१) 'प्रेम-पात्र' पर 'मरनेवालों' से—

(३५) हार से जीत ८३

(२२) मूर्ख शिष्य बनाने वाले गुरुओं से—

(३६) गुरु-सेवा ! ८४

(२३) 'हाबा'-वादी बन्धुओं से (पुनः)

(३७) 'विजया-वाटिका' ८७

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

सम्मतियाँ—

'छेड़छाड़'—

किन्हें कैसी लगी !

(१) कविवर डॉ० हरिवंशराय जी 'बच्चन' एम० ए० पी० एच० डी०—

आपकी रचना से मेरा मनोरंजन हुआ।........धर्मपत्नी के नए अर्थ पर चौंक उठा। सूक्ष्म पर बधाई। 'प्रेम से कठिन प्रेम काव्य साधना है, मित्र !' पंक्ति में आपने बड़े मर्म की बात कहदी है। यह मुझे सदा याद रहेगी।

(२) सम्पादकाचार्य श्री बनारसीदासजी चतुर्वेदी एम० पी०—

'समय की सी' 'कविराज' 'कवि और पत्रकार' प्रभृति को पुनः पढ़ गया। बढ़िया चीजें हैं।.......आप बधाई के पात्र हैं।

(३) सुप्रसिद्ध विद्वान् डॉ० श्री बलदेवप्रसाद जी मिश्र एम० ए० डी० लिट्—

"छेड़छाड़" में हास्यरस के अनेक उत्तम उदाहरण अनायास मिल गये। शिष्ट हास्य और विनोदात्मक व्यंग लिख लेना सरल नहीं है। आपने ऐसी रचनाएं सफलता पूर्वक प्रस्तुत कर सकने की नैसर्गिक प्रतिभा पाई है। विशुद्ध मनोरंजन और समाज-सुधार दोनों ही दृष्टिओं से ऐसी रचनाओं की अपनी विशिष्ट उपयोगिता रहा करती है।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

(४) सम्पादकप्रवर श्री अक्षयकुमार जैन

(सम्पादक—"नवभारत टाइम्स")—

शिष्ट हास्यात्मक यह पद्य संग्रह निस्सन्देह एक मनोरंजक कृति है। भाषा में सौष्ठव है, गति है, माधुर्य है एवं हास्य के साथ साथ व्यंग भी। ऐसी सुरुचिपूर्ण रचना पर श्री चतुर्वेदी को मेरी बधाई।

(५) आचार्य्य श्री विनयमोहन शर्म्मा (शासकीय महाकोशल महाविद्यालय, जबलपुर)—

पढ़कर हृदय में अपार हर्ष और संतोष हुआ। आप प्रतिभा के धनी हैं रस-सिद्ध कवि हैं इसमें लेष मात्र भी सन्देह नहीं। छेड़छाड़ का हास्य शिष्ट है पर लक्ष्य को बड़ी चतुराई से बेधता है। आप 'रक्त-हीन' ऑपरेशन करने में सफल हैं। बधाई।

(६) सुविख्यात साहित्यकार श्री प्रभाकर माचवे

(सहायक मंत्री—साहित्य अकादमी, नई-दिल्ली)—

शिष्टहास्य और व्यंग भरे कवित्तों और अन्य कविताओं ने मेरा बहुत मनोरंजन किया।

(७) महापण्डित श्री राहुल सांकृत्यायन—

हास्य-व्यंग के सम्बन्ध में हिन्दी के भण्डार को भरने की आप जो कोशिश कर रहे हैं, उसे जानकर मुझे बड़ी प्रसन्नता हुई। "छेड़छाड़" उसका ही एक प्रमाण है। आशा है आपकी सशक्त लेखनी अपने काम में उसी तरह बराबर तत्पर रहेगी।

(८) डॉ. शान्तिकुमार नानूराम व्यास एम- ए. पी. एच. डी.

(सह-सम्पादक 'साप्ताहिक हिन्दुस्तान')

हास्य शिष्ट है और व्यंग्य तीखे हैं। काव्य की अनुभूति

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

(१४) कविवर डा० पद्मसिंह जी शर्मा 'कमलेश' एम० ए० पी० एच० डी०

हिन्दी में हास्यरस के जो कलाकार हैं उनमें श्री पं० हृषीकेश चतुर्वेदी का महत्वपूर्ण स्थान है। हास्य के नाम पर अशिष्ट भाषा और अभद्र भावों का जो प्रदर्शन आज हो रहा है उसे देखते हुए हमारे चतुर्वेदी जी शिष्ट हास्य के आदर्श कवि कहे जायँ तो अत्युक्ति नहीं है।''''उनकी 'छेड़छाड़' का प्रकाशन हिन्दी के लिये गौरव की बात है।

(१५) प्रख्यात आलोचक-प्रवर डॉ० श्री रामविलासजी शर्म्मा एम० ए० पी० एच० डी० ("साप्ताहिक हिन्दुस्तान" में लिखते हैं)—

मानना होगा कि चौबे जी का हास्य शिष्ट और सोद्देश्य होता है। उन्होंने साधारणीकरण द्वारा पत्नी को हास्य रस का आलम्बन नहीं बनाया। उनकी हास्य रस की रचनाओं में भरती के शब्दों का अभाव होता है और भाव-पक्ष में जिसे सुनाने पर आजाते हैं, उसे वेभाव की सुनाते हैं।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

'छेड़छाड़' पृष्ठ सं० ८७ पर प्रकाशित
'विजया-वाटिका' के प्रथम संस्करण पर

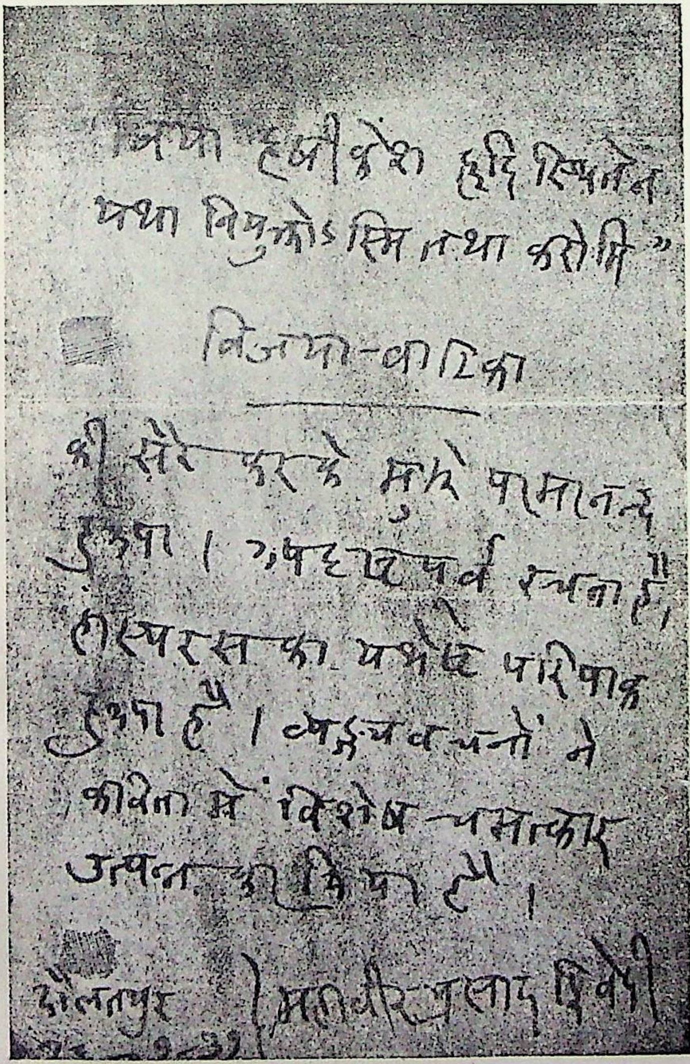
"यथा हृषीकेश हृदि स्थितेन
यथा नियुक्तोऽस्मि तथा करोमि"

विजया-वाटिका

श्री सौ[illegible] पढ़ के मुझे परमानन्द हुआ। [illegible] रचना है, हास्यरस का यथेष्ट परिपाक हुआ है। व्यङ्ग्य वचनों ने कविता में विशेष चमत्कार उत्पन्न कर दिया है।

दौलतपुर — महावीरप्रसाद द्विवेदी

स्व० आचार्यप्रवर श्री महावीरप्रसाद द्विवेदी
की शुभ-सम्मति (२६-७-३७)

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

ॐ

अपनी बात—

जी ! कुछ आपसे ही कहना है—

स्यार और लोमड़ी का अन्तर न ज्ञात जिसे,
हंस औ, बतख की जिसे न पहचान है;
जानता नहीं जो कर्मकल्ला और शल्जम को,
बेला, मोंगरे का पुष्प जिसको समान है;
गेंहू और जौ के पेड़ एक-से जिसे हैं; वही-
करै छोटे मुँह 'छेड़छाड़' ये महान है !—
है यह 'किन्हीं' की 'करनी की कथनी' ही, मित्र !
नहीं मिथ्यारोप है, न यह अपमान है ॥

चौबेजी का कटरा,
किनारीबाजार, आगरा।
*पौष कृष्णा ३ सं० २०१३

विनीत—
हृषीकेश चतुर्वेदी

* लेखक का पचासवाँ 'जन्म-दिवस'।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

समर्पण

(जिनसे छेड़-छाड़ की जारही है,
उन्हीं महानुभावों की सेवा में)—

जो हित-अनहित हुआ किसी भी पुण्य-पाप से,
उसे भूलिये—किन्तु, न अब हो अहित आपसे !
करिये विमल स्वरूप, देख यह पुस्तक-दर्पण—
यही विनय कर, मित्र ! इसे करता हूँ अर्पण।

विनीत—
हृषीकेश चतुर्वेदी

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

छेड़छाड़

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

'प्रेस के भूत'—

'क' का ये कलेवा करें, 'ख' को खायें पेट-भर,
'ग को गट्ट, 'घ' को घुट्ट गले में उतारते;
'च' को चखें, 'छ' को छकें, 'ज' को जीम, 'झ' से झिकें,
'ट' को टूँग, 'ठ' को ठेस, 'ड' को हैं डकारते।
'न' को हैं निगल-जाते, 'प' का करते हैं पान,
'फ' को फाँक, भ' को भख, 'म' पै मुँह-मारते;
'व्यंजन' छत्तीस नित्य पाते 'प्रेस-भूत', तो भी-
लेखक-बेचारों पर दया न बिचारते ॥❀

❀ साधारण भूत तो भोजन की एक पत्तल से ही सन्तुष्ट हो जाता है; किन्तु 'प्रेस के भूतों' के सामने सदा छत्तीस 'व्यंजन' ('क' से 'ज्ञ' तक) विद्यमान रहते-हुए भी वे वश में नहीं आते।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

'लाला-लीला'—

(१)

दोऊ टेंम हवा खात, बैदजू की दवा खात,
ब्याज सौं पै सवा खात, अति इतरात हैं;
दबिकें रहम खात, चारि में सरम खात,
कौड़ी पै कसम खात, बढ़ि बतरात हैं।
पञ्च बनि घूँसि खात, निबल कों चूसि-खात,
सूधरे कों मूसि-खात, मन मुसकात हैं;
एते हू पै अम्मा कहें, 'लल्ला कछू खात नाहिं',
लल्ला तौ बिचारे खात-खात न अघात हैं ॥

(२)

स्वारथ पै कान देत, धन पर ध्यान देत,
दमड़ी पै प्रान देत, नेंक न लजात हैं;
दुर्जन कों त्रान देत, हाकिम कों मान देत,
कोरे वाक्य-दान देत, मन में सिहात हैं;
दुखित पै तारीं देत, माँगते को गारीं देत,
आयें दुतकारीं देत, देखि अनखात हैं;
देत-देत लालाजू कों पल की हू कल नाहिं,
ताहू पै वे जग में, कृपण कहे-जात हैं ॥

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

(३)

स्वर्णकार, चर्मकार, वस्त्रकार, शस्त्रकार,
लौहकार, कुम्भकार और रथकार हैं;
चित्रकार, नृत्यकार, स्वरकार, शब्दकार,
कलाकार, कथाकार, अभिनयकार हैं।
कृषिकार, शिल्पकार, मालाकार, सूचीकार,
चाटुकार, पत्रकार और सरकार हैं;
अपने ही आसरे सभी को मान, लाला बनें-
कमला, कुबेर, विष्णुजी के अवतार हैं॥

(४)

लाला पढ़े 'ला-ला', अर्थ से ही रखते हैं अर्थ,
जानें विना-अर्थ व्यर्थ जग की जलपना;
रहते करोड़ जोड़ने के जोड़-तोड़ में ही,
लाते कल्पना में भी न दीनों का कलपना।
चाँदी इनकी है यहाँ आठ याम, साठ घड़ी,
सोने में भी देखते हैं सोने का ही सपना;
पञ्चदश अक्षर का सीखे महामंत्र एक—
'राम-राम जपना, पराया माल अपना'॥

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

(५)

चींटिओं को चीनी, चील-कुत्तों को कचौड़ी, तथा
कच्छ-मच्छ-चिड़ियों को गोलियाँ चुगाते हैं;
तोतों औ कपोतों को खिलाते ज्वार-बाजरा हैं;
बन्दरों को चनें, घास गायों को डलाते हैं।
बड़े ही दयालु, धर्म-शीलवान सेठ जी हैं,
नम्रता के मारे धरती में झुके-जाते हैं;
ब्याज-'ब्लैक' चौगुना मनुष्यों से, भले ही लेते !
किन्तु, वह पाप गङ्गा न्हा-के बहा-आते हैं ॥

(६)

किसी के भले-बुरे से सेठ जी को काम नहीं,
निज मार्ग जाते, और निज मार्ग आते हैं;
कछुए घसीटें जिसे, भूल उसकी है; ये तो-
घाट पै सदा से उन्हें गोलियाँ चुगाते हैं।
साँड़ सींग मारें किसी के, तो इनका क्या दोष ?
ये तो पुण्य-हेतु उन्हें घास डलवाते हैं,
छत पै जिमाते बन्दरों को, काटें किसी को वे,
सब-लोग अपने किये का फल पाते हैं ॥

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

(७)

अधिकारियों को हाथ में ही रखने के लिये,
'साह्व-सलामत' को लाला नित्य जाते हैं;
बालकों के लिये लिये-जाते हैं मिठाई, और-
मेंम-साहिबा के लिये 'कार' पहुँचाते हैं।
जनता को रोते, गुण गाते सदा साहब के,
चाकर-से नाचते, न नेंक सकुचाते हैं;
ऐसे सेवा-भाव के प्रभाव से ही आप आज,
नगर के अग्रणी रईस कहलाते हैं॥

(८)

❀ (अनुपम सेठजी)

सरग, नरक, दस-दिसि, छिति, गगनहिं,
नहिं लखियत इन-सरिस इतर जन;
निज लगनहिं रत रहत सतत इहँ,
जिनहिं न रति जग-हित-अनहित सन।
अघ-गन-गरत गिरत नर-तन लहि,
गहत न इक छन कहँ हरि-चरनन;
असत 'असित' निसि-दिन निधरक करि,
धरत धरनि नित-नित अगनित धन॥

❀ यह उपशीर्षक केवल पद्य सं० ८ का है। 'अनुपम' का एक अर्थ तो स्पष्ट ही है, दूसरा अर्थ यह है, कि यह पद्य निरोष्ठ्य है, जो अन् (= बिना) उ, प, म, आदि के है।

इस पद्य में कोई संयुक्ताक्षर तथा 'इ' के अतिरिक्त कोई अन्य मात्रा नहीं है। गरत (गर्त) = गड्ढा।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

(९)

आयौ 'अर्थ' युग, खैंच-खाँच रुपया की बढ़ी,
घर करि-बैठी घर-घर बनियाई है;
आये दिन वस्तुन में करिकें 'असित-वज्र'
पूँजीपति-लालाजू की आजु बनि-आई है।
खरी सुनिबे कों, भला! किन्हें नौंति-बैठे आप—
मन में कहौगे, 'भली भूलि बनि-आई है!'
कवि जी पै पूर्ति बनि-आई, कै न बनि-आई,
आप पै समस्या यह 'खूब बनि-आई है'!!*

(१०)

अन्न, वस्त्र आदि में निशङ्क 'चोर-हाट' कर,
जनता पै अनरीति आपने अनन्त की;
पूर्व-जन्म, या कि पूर्वजों के पुण्य से ही, बस,
कृपा किसी भाँति आप पै है भगवन्त की।
सागर में रह के मगर से न बैर करो,
कान खोल सेठ जी! सुनों ये बात तन्त की;
कनक की सनक, या रजत की खनक में।
ख़बर नहीं है अभी, आपको बसन्त की!!

* यह पद्य 'खूब बनि-आई है' समस्या की पूर्त्ति है।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

(११)

सीमा से न आगे अब और अनाचार करो,
बुरा फल होता है अधिक गाँठ काटे का;
सिन्धु के उफान का समय सब जानते हैं,
किन्तु, क्या पता है जनता के ज्वार-भाटे का?
'चोर-हाट' त्यागकर धर्म का बनिज करो,
जिसमें न प्रश्न उठता है कभी घाटे का;
समय रहे ही सोच-जाओ, तो भला है लाला!
अन्यथा, है मिलने को भाव दाल-आटे का॥

(१२)

पीड़ित-निराश्रितों को आश्रय दिलाने-हेतु,
लोक-सेवकों ने तुमसे जा नाक रगड़ी;
तुमने दिखा के दया, आठ के बताये साठ,
कोठरी दी छोटी-सी, रक़म लेके तगड़ी।
धर्म-कर्म नष्टकर, मानवता भ्रष्टकर,
सोची लाभ-लोभ में न बात बनी-बिगड़ी;
गौरव बचाने, खिसियाहट मिटाने अब,
चाँदी के हैं जूते, तिन्हें कह-रहे 'पगड़ी'!!

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

(१३)

श्रमिकों के श्रम में से पैसा रुपये पै काट,
आपने, भले ही, धर्मशाला बनवादी है;
ब्याज-'ब्लैक' चौगुने से भली भाँति द्रव्य जोड़,
चन्दा दे, भले ही, दान-वीरता दिखादी है।
घूँस, 'पगड़ी' ले तगड़ी-से तगड़ी सदैव,
किसी विप्र-कन्या की भी शादी करवा-दी है;
किन्तु, ये भुलावे 'पूँजीवादिता' ढकेंगे नहीं,
उसके लिये तो आवरण एक खादी है !!

'फुट-नोट'—

ब्राह्मण, या क्षत्रिय का प्रश्न ही वहाँ पर क्या ?
वैश्य हैं कि शूद्र, इसका भी क्या ठिकाना है ?
'अर्थ' उनका है धर्म, धर्म से उन्हें न अर्थ ;
जैसे बनें बानक, वैसा ही बनें बाना है।
"कौन हैं ? कहाँ के हैं ?"-न पूछने की बात यह—
नगर-नगर मकड़ी-सा जाल ताना है;
'चोर-हाट' में हैं ख़ूब लाला ने उछाला नाम,
कहीं-अच्छा ऐसे का न नाम लिया-जाना है !!

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

बरात या डाका !!!

शस्त्र-साज-बाज से सुसज्जित स-दल-बल,
आकर उन्होंने, चट, घेर-लिया नाका है;
माँग है सहस्रों की, न चिन्ता से है काम उन्हें,
'द्रव्य आपका है, किसका है, या, कहाँ का है !'
भूषण, बसन, पात्र, अन्न, पशु, वाहनादि,
हाथ-लगा जो भी, सब उनके पिता का है;
ख़ातिर जमाई-जैसी सभी चाहते हैं, भला !-
आप ही बताइये, 'बरात है कि डाका है ?'

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

कवि और पत्रकार—

ये पद्य-कार, वे पत्रकार।
दोनों हैं, सबविधि, गुण-निधान;
दोनों हैं, सकल-कलावतार॥

(१)

हैं छपे-हुए, या छिपे-हुए,
सब में कहने की बात न यह;
बस, किया-कीजिये दोनोंसे,
बा-अदब, दूरसे नमस्कार॥

(२)

गा शान्ति-समय में क्रान्ति-राग,
कर क्रान्ति-समय में शान्ति-पाठ,
बन पथ-दर्शक, रक्षक, सेवक,
रहते जनता के शिर सवार॥

(३)

इनपर न किसी का कुछ कोड़ा,
चलता है बे-लगाम घोड़ा,
प्रत्येक क्षेत्र में निर्भय हो,
करते प्रवेश, विचरण, विहार॥

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

(४)

निज प्रबल लेखनी के बलपर,
ये तोपों का मुँह करें बन्द,
करवाते रक्त-विहीन क्रान्ति,
करके करुणा, होकर उदार ॥

(५)

हैं शब्दब्रह्म - वादी दोनों,
दोनों सु-वर्ण के चाहक हैं;
दोनों की कृतियों में,
रहता है छिपा, अर्थ का चमत्कार ॥

(६)

पल में, पुल बाँध प्रशंसा के,
करते बुद्धू को बुद्धिमान;
कुख्यात करें विख्यातों को,
कर-बैठें यदि उलटा प्रचार ॥

शब्दार्थ—पद्य सं० ५ सुवर्ण = (१) सुन्दर अक्षर
(२) सोना, अर्थात् द्रव्य
अर्थ = (१) शब्दार्थ (२) द्रव्य

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

(७)

उड़ती-ख़बरें भी बे-पर कीं,
छपकर कहलातीं 'पेपर' कीं;
समझे - जाते हैं, 'वेद-वाक्य',
जो कुछ कहदें ये एक बार ॥

(८)

है अकथनीय इनकी गाथा;
है अति अवर्ण्य इनका वर्णन;
इनकी लीलायें हैं अनन्त;
इनकी माया-महिमा अपार ॥

(९)

अब, कहैं कबीर, सुनों साधो !
निज घूँघट के पट लो-उघार;
सम्मुख ही राम तुम्हारे हैं,
जी-भर-भर हेरो बार - बार;
सम्मुख घनश्याम तुम्हारे हैं,
मिल-लो इनसे बाँहें पसार ॥

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

"गवैया-कवि"—

वे कविवर और गवैया, दोनों साथ-साथ !

(१)

उनके शीतल हिम-जल-से भावों-भरे गीत
सुनकर, करते निज तृप्ति 'प्रेयसी' और 'मीत';
कुछ खट-मिट्ठे दधि-बूरे-से शब्दों पर ही
निर्भर-रहती है प्रायः उनकी हार-जीत;
वे कुल्लड़ और सरैया, दोनों साथ-साथ ॥

(२)

वे 'कीट्स', 'बायरन' के कुछ कटिंग् कुतर-लाते,
निज रचना-बिल में उन्हें जमाकर इतराते;
पर, पढ़े-लिखों पर रङ्ग जमाते-हुए कभी-
पकड़े-जाते, तब खम्भ-नोंचते, खिसियाते;
वे मूषक और बिलैया; दोनों साथ-साथ ॥

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

(३)

कुछ मूँछ मुँड़ी-होने से, पिचके गालों से,
कुछ क्रीम पाउडर से, कुछ लम्बे बालों से;
वे कोरे हाव-भाव, स्वर-लय आदिक-द्वारा,
करते श्रोताओं को विमुग्ध इन चालों से;
वे 'नर्गिस' और 'सुरैया' दोनों साथ-साथ ॥

(४)

उनके कुछ ऊँचे भाव गगन में उड़-जाते,
कुछ गहरे-जाकर, सागर में ग़ोते खाते;
जो शब्दों-द्वारा प्रकट, किसी विधि, होते हैं,
वे अधिक न ऊँचे, और न गहरे जा-पाते;
वे टीला और गढ़ैया दोनों साथ-साथ ॥

(५)

जो समझे, तिनसे मान न उनको मिला कभी,
ना-समझ लोग कुछ समझ न पाये उन्हें अभी—
आ-गये, गा-गये स्वर से, चलिये, ठीक हुआ!
बन-गई बात, मिल गई 'वाह'! चुप-रहे सभी;
वे दमड़ी और रुपैया, दोनों साथ-साथ ॥

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

(६)

वे 'किसी' जलधि में ज्वार उठाने को निकले,
निज काव्य-कलाधर-रूप दिखाने को निकले,
पर, वह अचमत्कृत चमक, रही टिम-टिम करती,
वे जिसे विश्व-भर में फैलाने को निकले;
वे चन्दा और तरैया, दोनों साथ-साथ ॥

(७)

वे 'सजनि'-सरित् की प्रेम-धार में बहते हैं,
यह भेद उन्हीं के शब्द किन्हीं से कहते हैं;
पर, स्वयं भँवर में भ्रमते-भी, वे जन-जन के-
जीवन-संचालन-हेतु समुद्यत-रहते हैं;
वे नैया और खिवैया, दोनों साथ-साथ ॥ ७ ॥

(८)

चर-अचर, जगत् को प्रेम-मग्न वे पाते हैं,
प्रेमी, प्रेयसि, बस उन्हें दृष्टि में आते हैं,
निज कृति-आकृति से प्रकृति-पुरुष का भेद मिटा,
वे स्वयं प्रेयसी का स्वरूप बन-जाते हैं;
वे माया और रमैया, दोनों साथ-साथ;
वे राधा और कन्हैया दोनों साथ-साथ ॥

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

'महाकवि' से—

सखे ! ये काव्य-क्रीड़ाएँ दिखाना किससे सीखे हो ?
निराली नव्य-लीलाऐं रचाना किससे सीखे हो ?

वड़ा लावण्य शब्दों में, वड़ा माधुर्य्य भावों में,
नमक में इस तरह मिश्री मिलाना किससे सीखे हो ? ॥

स्वरों की, हाव-भावों की छटा सब ओर छिटका कर,
नये नित, जाल में 'पंछी' फँसाना किससे सीखे हो ?

'किसी' रस-धार में बहते, बहाते काव्य रस-धारा,
ये बहने में बहाने का बहाना किससे सीखे हो ?

सफ़ाचट मूँछ, लम्बे बाल, मुख पर क्रीम कुछ 'लाली',
नये नर-सिंह का 'मेकअप' बनाना किससे सीखे हो ?

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

कथायें 'धर्म-पत्नी' 'प्रेयसी' की नित्य गा-गाकर,
हँसी के पात्र बन, जग को हँसाना किससे सीखे हो ?❀

चढ़ाकर रङ्ग शब्दों का पराये भाव-भवनों पर,
वृथा अधिकार निज उन पर जताना किससे सीखे हो ?

सभा में छींक-दी मक्खी, बिदक कर बन्द की कविता,
अदा से रौब जनता पर जमाना किससे सीखे हो ?

क्षमा करिये—बहुत चाहा, न पूछें; पर, न मन माना,
कि चूरन के सुघर 'लटके' सुनाना किससे सीखे हो ?

तुम्हीं हो तुम, तुम्हारी बात की क्या बात ! क्या कहना !
बनाना बात का, पर सच बताना—किससे सीखे हो ?

❀

❀ धर्म-भगिनी के समान ही धर्मपत्नी वह है, जो विधि-पूर्वक बनी-हुई पत्नी न हो।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

कविराज—

(१)

वर्ण कर्ण-कर्कश हैं, शब्द अन्य-अर्थक हैं,
वाक्य व्याकरण के न रञ्चक अधीन हैं;
भाषा 'खिचड़ी' है 'वासलेटी' रचना का ढङ्ग,
उक्तियाँ अनर्गल हैं, अलङ्कार हीन हैं।
'गति'-'यति'-भङ्ग-युक्त, तुकों से विमुक्त छन्द,
नीरस विषय, भाव दूषित, मलीन हैं;
तिस पै भी, 'बुद्धि के जहाज' कवि महाराज
'सूर', 'तुलसी' को गिनें कौड़ी के न तीन हैं!

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

(२)

कविजी स्वतन्त्र हैं, किसी के हैं दबैल नहीं,
निज-मन-चाही सदा कविता सुनाते हैं;
आध-आध-घण्टे लम्बे खर्रे पढ़ते हैं चार,
व्याख्या के सहित प्रति पंक्ति दुहराते हैं।
जनता के हल्लों से हिलाये-हिलते हैं नहीं,
सभापति की न घण्टियों से घबराते हैं;
अङ्गद-से डटते, 'हमीर'-हठ ठानते हैं,
हज़रत 'दाग़' से अड़े ही रह-जाते हैं ॥

(३)

मात्रा बढ़ने पै गुरुवर्ण लघु-सम पढ़ें;
घटने पै, पीछे से 'अवग्रह' लगाते हैं;
भाषा की कमी पै शब्द शुद्ध-सिद्ध-करने को,
व्याकरण के भी दाँव-पेच दिखलाते हैं।
भावों के अभाव में, प्रभाव डालने के लिये,
हाव-भाव के सहित तीन बल खाते हैं;
इतने-भगीरथ-प्रयत्न पर 'कविराज',
जैसे-तैसे बीस में से पाँच अङ्क पाते हैं ॥

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

(४)

'गति' और 'यति' का प्रबन्ध नहीं बँधता, तो-
कौन कहता है, आप पद्य ही बनाइये?
उमड़-पड़ा है यदि कविता का स्रोत ही, तो-
गद्य-काव्य में ही चमत्कार दिखलाइये।
प्रकृति-विरुद्ध लिख-लिखके 'रबड़' छन्द,
निज लेखनी की मत शक्ति को गिराइये;
स्वान्त-सुख-हेतु लिखना हो, लिखिये; परन्तु-
भोले काव्य-रसिकों पै रौब न जमाइये ॥

(५)

आज, कवि-सम्मेलन गायक-समाज बनें,
कण्ठ-कला-कोविद जहाँ पै मान पाते हैं;
स्वर के सहारे बड़े काव्य-गुरुओं के आगे,
कोरे तुकबन्द कविराज बन-जाते हैं।
'बे-सुरे विधाता' भी न गाये-विना मानते हैं,
पढ़ते न सीधे, 'तानसेनी' दिखलाते हैं;
ऊँचे भव्य-भावों का भी भाव यों गिराते, और-
सभ्यों की सभा में स्वप्रभा को भिनकाते हैं॥

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

(६)

बार-बार कुल्लड़ों से कंठ सींच-सींच कर,
'कवि महाराज' जब कविता सुनाते हैं;
मैंना, शुक, कोकिल, 'सिनेमा-तारिकायें' तक,
आपकी बराबरी न कोई कर-पाते हैं।
नासिका के स्वर से कराहते-से बोलते हैं,
रोते तो नहीं हैं, कुछ 'मर्सिया'-सा गाते हैं!
प्रेयसी के द्वार से खदेड़े-हुए ऐसे जीव,
सीधे काव्य-मञ्च से ही आके टकराते हैं॥

(७)

करके सहानुभूति उन्होंने वियोगिनो से,
मूँछें मुँड़वाईं और बालों को बढ़ाया है;
त्योंही विधवाओं की असीम समवेदना में,
माँग में न भूलके भी सिन्दुर लगाया है।
पीड़ितों की आहों ने, कराहों ने ही उन्हें आज,
नाक के सहारे धीरे बोलना सिखाया है;
करुणा-प्रदर्शन के बल पै उन्होंने, अहो!
चार ही दिनों में 'कविराज'-पद पाया है॥

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

(८)

आकृति है उनकी सभी विधि मधुर बनी,
कृति में मधुरता न आई, तो न आने दो;
हाव-भाव आगये पसन्द यदि जनता को,
कविता के भाव न सुहाये, न सुहाने दो।
रचना में रस नहीं, रसना में रस सही!
गाके वे जमाते रङ्ग, प्रेम से जमाने दो;
साहित्यिक-हानि नहीं किसी की भी व्यक्तिगत,
वे जो कविराज बनते हैं, बन-जाने दो ॥

*

19709

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

कहें, या न कहें ?

(१)

कहें या न कहें—कहें भी तो कहाँ तक कहें !—
मची आज कवियों की भारी रेल-पेल है;
यहाँ कवि, वहाँ कवि, ये हैं कवि, वे हैं कवि,
काव्य-वृक्ष पर चढ़ी ये, अमर-बेल है।
पढ़ते शृङ्गार, हास्य, जीभ पै लगाम नहीं,
शिर पै न अंकुश, न नाक में नकेल है;
प्रेम से कठिन प्रेम-काव्य-साधना है, मित्र !
हँसना - हँसाना नहीं कोई हँसी-खेल है ॥

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

(२)

दूसरों के भाव ले, जमाने को प्रभाव निज,
ओढ़ी आज गीदड़ ने केहरी की खाल है;
कोरे हाव-भाव, स्वर आदि का दिखा के रङ्ग,
चाहता है काक, लोग कह दें, 'मराल है'।
बड़ों के समान, अपने को मान, 'मान' कर,
मेंढ़की भी चाह-रही बँधवाना नाल है;
'कविराज' बनने की सभी को समाई धुन,
धन्य ! धन्य ! भारत की अच्छी भेड़-चाल है ॥

(३)

हिन्दी कवि बनने में कुछ कठिनाई नहीं,
आज सोइये, तो कल कवि बन, जागिये;
यति, गति, तुक, गण आदि को बताके धता,
छन्द के कठोर बन्धनों से दूर भागिये।
कर्ता, कर्म, क्रिया को इधर का उधर कर,
कोष, व्याकरण से सहायता न माँगिये;
लोग जानलें, कि यह पद्य है प्रगतिशील,
गद्य का स्वरूप अतएव, बस त्यागिये ॥

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

(४)

नाम लूटने पै तुले, जब से हैं 'कविराज',
काव्य-गोष्ठियों में भर-पेट बकबाद की;
'छाया' की न छाया, न 'रहस्य' का रहस्य मिला,
तोड़े पाँच निब, दस पेंन बरबाद की।
हार कर पिल-पड़े श्रमिकों किसानों पर,
बसी खोपड़ी में गन्ध गोबर औ खाद की
नेताओं के काम पर नाम निज करने को,
कविता रचाने-लगे उग्र राष्ट्रवाद की ॥

(५)

छिपे-हुए कवियों की उन्होंने उड़ाके कृति,
छाप अपनी से किसी पत्र में छपा-दिया;
लेकर सहारा त्यों किन्हीं विशेष-व्यक्तियों का,
चारों ओर योग्यता का हल्ला मचवा-दिया।
होते ही प्रसिद्ध, चेले-चाँटों से लिखाये लेख,
टके कुछ देके, नाम अपना लगा-दिया;
ऊँचे महारथियों पै कीचड़ उछाल कर,
सहज ही, सिक्का सारे जग में जमा-दिया ॥

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

(६)

गद्य यदि होती, तो न होती व्याकरण-शून्य,
पद्य यदि होती, तो न होती गति-यति-हीन;
नाट्य यदि होती, तो दिखाती गद्य-पद्य दोनों,
रहते अलग जो, न होते एक में ही लीन।
वह तो 'ग-पद्य' बन कर, बरबस रही-
गद्य की सुबोधता औ पद्य-माधुरी को छीन,
ऐसी पटुता में कर्ण-कटुता ही आती हाथ,
उच्च भाव को भी, कर-देती जो निपट-दीन ॥

(७)

पद्य की पढ़न्त में, हैं भूल-जाते 'कविराज,'
कौन देश, कौन पात्र, कौनसा समय है;
तनिक भी नहीं सोच-पाते इस बातको, कि-
कहाँ पै सुनाने-योग्य कौन सा विषय है।
महिला-पुरुष, बाल-वृद्ध का न ध्यान उन्हें,
शिष्टता-अशिष्टता का नेंक भी न भय है;
हास्य उन्हें दीखता विना-नकेल ऊँट-जैसा,
'गुड़ियों का खेल' जान-पड़ता प्रणय है ॥

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

(८)

बालक का कर्ण-वेध, मुण्डनादि कीजिये, या-
कहीं, किसी संस्था का महोत्सव मनाइये;
नेताओं का स्वागत, या अधिकारियों की विदा,
या, चुनाव आदि की सभायें करवाइये।
कन्या, या कि पुत्र के विवाह-समारोह पर
राय-भाट-लोगों को न व्यर्थ ढुढ़वाइये;
निपट-निठल्ले 'कविराज' हैं सुप्राप्य सदा,
जब जहाँ चाहें, आधीरात बुलवाइये ॥

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

"कवि-सम्मेलन"—

"चकले भाई ! सुनों" प्रेम से बोले 'बेलन';
"बृहद्, विशाल विराट, आज है कवि-सम्मेलन।"

(१)

मचा-रहे अति धूम, नगर में 'ध्वनि-विस्तारक'
घूम-घूम कर, रहे "निमन्त्रण" बाँट प्रचारक,
दूर-दूर से यहाँ महाकविरत्न पधारे,
जिनका है साहित्य सुरुचिकर, जन-हितकारक।
बरसायेंगे दिव्य-मोद ये सघन काव्य-घन। बृहद्०

(२)

सजा-हुआ है मञ्च, दृश्य है दृग-सुखकारी,
प्रमुख-जनों की भीड़ डटी उस पर अतिभारी!
किन्तु, न चिन्ता करो सभी कवि-लोग नहीं वे;
कुछ नेता, कुछ पत्रकार, कुछ हैं अधिकारी;
'एक पन्थ दो काज'-सुनों कविता, लो दर्शन। बृहद्०

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

(३)

लो, देखो! होरहा सभापति का निर्वाचन,
जनता ने भी किया तालियाँ बजा समर्थन;
पर, वे स्वागत-माल पहनते ही उतारकर,
अपने को कह-रहे नितान्त अयोग्य, अकिञ्चन।
यों, न झूठ को पाप मानते शिष्ट मान्य-जन। बृहद्०

(४)

सुनों हुई प्रारम्भ "शारदा" मा की विनती,
कोलाहल में एक गले की क्या है गिनती?
यह श्रद्धा का श्राद्ध, भक्ति की मुक्ति होरही।
पर, होने दो! नहीं किसी की माया छिनती!
"शान्त" सभापति कहें, करें घण्टी की टन-टन। बृहद्०

(५)

कविवर 'स्वागत' सुना रहे, कह 'लघु-तुकबन्दी'
समय ले-रहे बहुत, चलें कच्छप-गति मन्दी।
है यह बीसौ बिसे राजकवि की राज-स्तुति;
क्या रच-सकते राय, भाट, चारण या बन्दी?
प्रमुदित हैं वे 'धन्य-धन्य' का सुन गुरु गर्जन। बृहद्०

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

(६)

आये 'नव नरसिंह' वीर-रस-काव्य सुनानें;
मृदुल-कण्ठ, मुँछ-मुण्ड 'सींकिया ज्वान' सयानें
पढ़ते छाती तान, किन्तु कटि लचके खाती,
ले नीरस कृति, लगे मेंमने-से मिमियानें।
अधपर ताली पिटी; गये वापिस, मसोस मन। बृहद्०

(७)

अब शृङ्गारी 'गीतकार' कविवर हैं आये;
सुना, चारसौ-बीस इन्होंने गीत बनाये।
लौट-फेर ये किन्तु, पाँच-छह की ही रखते।
पद्य सभी हैं मधुर, यदपि हैं सुने-सुनाये।
कोमल कोकिल-कण्ठ, सिनेमा की मनहर 'धुन'। बृहद्०

(८)

सुनों सुनों, निज काव्य सुनाते अब जन कविवर,
कृषक-श्रमिक को छोड़, नहीं जो लिखें किसी पर;
पूंजी-पति सब इन्हें दीखते, 'पूँजीवादी।
ऊँची सेवा करें 'फ़ीस' ऊँची ये लेकर।
इन्हें कथा के और, और हैं घर के बैंगन। बृहद्०

Sri Pratap Singh Library Srinagar.
CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

(९)

ऊबी-जनता देख, सभापति जी मुसकाये,
रस-परिवर्तन-हेतु हास्य-कवि गये-बुलाये।
शब्द न संयत, नहीं व्यंग्य के पुष्प-बाण पर,
सन्नाटा तो हटा, लोग कुछ हँसे-हँसाये।
पढ़ा "गधे" का काव्य, धर्म-पत्नी-पद-वन्दन। बृहद्०

(१०)

कवयित्री जी गीत पढ़ रहीं अब 'माइक' पर;
चार चाँद लग-रहे; क्योंकि है सहज-मधुर स्वर।
बीच सभा में लोग 'बिचारे', बिना विचारे,
कहे-जा रहे, 'वाह! बहुत सुन्दर! अति सुन्दर!'
क्षण में वातावरण बन-गया सरस, सजीवन। बृहद्०

(११)

लो देखो; इस बार आरहे 'प्रगतिशील' कवि,
लिखते ये स्वच्छन्द-छन्द, है भली बनी छवि!
सुन संस्कृत के क्लिष्ट शब्द श्रोता चकराये—
ये हैं, 'सचमुच' कालिदास, दण्डी या भारवि!
किन्तु, फ़ारसी शब्द देख, भ्रम गया हिरन बन। बृहद्०

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

(१२)

बजा रात का एक, लगे होने हो-हल्ले,
उद्योगी नर रमें, जमें रह गये निठल्ले।
गये 'घास-सी काट' कई कवि इस गड़बड़ में,
वे क्या-कुछ कह गये, किसी के पड़ा न पल्ले।
पर, अब हुल्लड़ गया; रही थोड़ी सी भन-भन। बृहद्०

(१३)

चक्र दूसरा चला, प्रथम होकर अब पूरा,
लड्डू तो ले-चुके, और ले-लो कुछ चूरा !
किन्तु, नहीं यह बात, ज्ञात तो होगा अब ही,
कौन पूर्ण कवि; कौन अभी है निपट अधूरा।
स्वर-लय का अब नहीं जमेगा यहाँ प्रदर्शन। बृहद्०

(१४)

प्रथम 'फेर' के 'फ़ेल' कई कवि 'पास' हुए अब,
इतना सुन्दर काव्य, कहाँ सुन-पाया था तब ?
कोरा कण्ठ-प्रभाव पड़ चुका है अब फीका—
आया 'सार' समक्ष, उड़-गया जब 'थोथा सब';
हुए निराकृत-भाव धन्य, पाकर सुवर्णतन। बृहद्०

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

(१५)

भाषण अब अध्यक्ष दे रहे, "सुनों मित्रवर !
वही काव्य-साहित्य, जगत् का जो अति हितकर ।
देश, काल औ' पात्र, देखकर लिखा-गया जो;
है जिसका उद्देश सत्य, शिव-मय, अति सुन्दर;
गद्य, पद्य या नाट्य, चमत्कृति-युत, नित-नूतन ।" बृहद्०

(१६)

सभाध्यक्ष वक्तव्य दे-चुके, बस, जैसे ही;
'धन्यवाद' को खड़े-हुए मन्त्री, तैसे ही ।
सम्मेलन, करदिया-गया सानन्द विसर्जित;
परम्परा की पूर्ति सदा होती ऐसे ही !
यही करेंगे शब्द स्वप्न में भी, मृदु गुञ्जन—
'बृहद, विशाल, विराट, आज है कवि-सम्मेलन ।'

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

समय की-सी—

कविवर ! सुमधुर काव्य सुनाओ ।
सुन्दर भाव, सरल भाषा से श्रोतागण का मन बहलाओ ॥

(१)

उन्हें मनोरंजन करना है; कवि का स्वाँग तुम्हें भरना है ।
पढ़ो सरस, रुचिकर, लघु रचना, लम्बी गाथा व्यर्थ न गाओ ॥

(२)

श्रोता, 'सोता' और 'सरौता', भाग्य सराहैं देकर नौता ।
'भाई-साहब' और 'बहिन जी'—सबके हृदय उमङ्ग जगाओ ॥

(३)

वीर-काव्य की माँग इधर है, 'प्रगतिशील' शृंगार उधर है ।
"दैंगे ताव कहाँ 'निमुच्छ' जी" ? मत यह सोचो, मत पछताओ ॥

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

(४)

नेता-गण से कुछ न कहो तुम; चुप है जनता, शान्त रहो तुम।
वे हैं पूर्ण अहिंसावादी—वाक्य-बाण उन पर न चलाओ॥

(५)

मिलता नगरों में जल नल का; 'घासलेट' घी, आटा 'कल' का।
कोमल युवक, सिनेमा-प्रेमी, स्वास्थ्य-पाठ मत उन्हें पढ़ाओ॥

(६)

कोकिल-कण्ठ बनाओ अपना; जमकर रंग जमाओ अपना।
कुछ खट-मिट्ठी कहो रिझाओ; खरी बात कहकर न खिझाओ॥

(७)

आज, बन-गये कवि-सम्मेलन मनोविनोद-मात्र के साधन।
यहाँ गूढ़ कविता-क्रन्दन कर, मत अपना उपहास कराओ॥

(८)

चाव, चाह से चाय पियो तुम; सेवा की मेवा भी लो तुम।
कुछ 'लावण्य', 'मधुर' रस चखकर, जन्म फलों से सफल बनाओ॥

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

"अमूल्य मंत्रणा"—

नहीं जानते तुम—'कविता है किस चिड़िया का नाम ?'
क्या लोगे 'कवि-सम्मेलन' में ! देखो अपना काम ॥

(१)

'अर्थ,' स्वार्थ के तुम सम्बन्धी; तुम्हें काव्य से क्या नाता है ?
कैसे कष्ट किया ? खोला क्या, यहाँ किसी से कुछ 'खाता' है ?
हुई देर लेते-जभाँइयाँ—करो मित्र ! विश्राम ॥

(२)

नहीं जगत् की सुख-दुख-चर्चा हृदय तुम्हारा पिघलायेगी;
ध्यान, भूल से, यदि दे-बैठे, तो न नींद तुमको आयेगी।
मुहँ ढककर सोओ—है जग में बड़ी चीज़ आराम ॥

(३)

'मीरासी'-से तुम्हें दीखते जीवन-गीत सुनानेवाले;
भाट-भाँड़ तुमको जँचते कवि, सत्पथ के दिखलानेवाले।
'स्वाँग' देखने आये, शायद, तुम तज कर निज धाम।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

(४)

कभी-कभी, कोई कविजी भी ऐसा गूढ़ काव्य पढ़-जाते,
बड़े-बड़े भी जिसे न समझें—रहें खोपड़ी ही खुजलाते।—
जानें वे ही आशय उसका, या फिर, जानें राम॥

(५)

कहते तुम कि, "काव्य-चर्चा में 'उद्योगी' न समय खोता है",
कविवर कहें, "भैंस के आगे बीन बजाये क्या होता है" ?—
अलग!राग, ढपली दोनों की बजती हैं अविराम॥

(६)

'कहाँ फँसे'! कह तुमने मन में, दे-लीं होंगी बीस गालियाँ;
विष से भरी लगी-होंगी ये काव्यामृतमय पद्य-प्यालियाँ।
विवश-हुए-से बैठे ऐसे यहाँ, हृदय को थाम॥

(७)

धन्यवाद है तुम्हें! किया जो तुमने अपना समय नष्ट है;
घर से आने में भी इतना हुआ व्यर्थ ही तुम्हें कष्ट है;
किन्तु, दूर से कविता को अब करना सदा प्रणाम॥

*

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

भङ्ग का लोटा—

(१)

लेखक ने ली इधर लेखनी, उधर 'मस्त जी' ने सोटा,
'रगड़ा' लगा इधर काग़ज़ पर, कूँड़ी-बीच उधर घोटा।
पढ़ें इधर डट-डट कर पाठक, पियें उधर 'भङ्गड़' अड़कर,
भाव-भरा है ग्रन्थ इधर यह, 'विजया'-भरा उधर लोटा॥

(२)

साहित्यिक सिल-लोढ़ी पर है जिसका नहीं लगा घोटा;
कभी न काव्य-वाटिका में जो बैठा, ले कूँड़ी-सोटा।
नहीं लगाई, डुबकी जिसने कलित कल्पना-सागर में;
व्यर्थ जिया वह, पिया न जिसने यह 'नवरस'-पूरित लोटा॥

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

(३)

सागर की कूँड़ी में दिनकर, डाल रश्मियों का सोटा;
'मस्तराम'-सम गरज-तरज कर, .खूब लगाता है घोटा।
जलदों की साफ़ी से फिर वह, छान श्वेत पय-मय विजया,
करता 'हरा' हृदय जगती का, सरित्-सरों का भर लोटा॥

(४)

सागर की विशाल कूँड़ी में, डाल 'मन्दराचल'-सोटा,
सुर-असुरों ने सुधा निकाली, देकर घोटे पर घोटा।
'मोहिनि'-कर से नीयमान वह गिरी छलक कुछ धरणी पर;
उसी 'असर'-बूटी 'विजया' से भरा लबालब यह लोटा॥

(५)

नहीं यहाँ सड़ती है हाला, यहाँ दिव्य लगता घोटा,
नहीं यहाँ वह 'साक़ी-बाला', यहाँ 'मस्त-मौजी' ढोटा।
'चचा मियाँ ! तुम कहाँ आ-गिरे, नहीं यहाँ गन्दा-नाला;
इस पावन 'विजया-उपवन' में छनता मन-भावन लोटा॥

(६)

मेंहदी-सम परिणाम-रूप में लाता नव लाली लोटा;
हृदय सन्निहित किये-हुये है अनुपम हरियाली लोटा।
'सित' बदाम से, 'कृष्ण' मिर्च से, स्वर्णिम आभा केशर से;
रखता है, यों, अदा निराली, पाँच-रङ्गवाली लोटा॥

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

(७)

किसी 'प्रेयसी' के रँग में क्या रँगा, रँगीला यह लोटा ?
पड़ा, कि जिसकी विरह-व्यथा से पीड़ित पीला यह लोटा।
नहीं, नहीं—दी इसे प्रकृति ने यह अनुपम सुवर्ण-काया;
है चमकीला, मस्त, रसीला, छैल-छबीला यह लोटा॥

(८)

करे अचेतन को यह चेतन, कहना मत अब जड़ लोटा!
'घुटा-मँजा' यह चतुर अहो! हो सकता है कब जड़ लोटा!
जड़ में तो, इसकी पक्की जड़ मालुम-पड़ती उसी समय,
'मस्त' किसी की, अहह! पीठ में देते हैं जब जड़ लोटा॥

(९)

पुजा बिल्लियों के झगड़े में ज्यों वानर जी का सोटा,
सिंह लड़े, तब मिला स्यार को मालपुओं का ज्यों पोटा!
देवासुर-संग्राम-मध्य ज्यों अमृत 'मोहिनी' ने पाया;
त्योंही, लड़तीं वे सिल-लोढ़ी, रस ले-लेता यह लोटा॥

(१०)

निजानन्द में है निमग्न जो, जिसका नहीं हृदय छोटा,
जिसके पावन-प्रेम-कोष में आता नहीं कभी टोटा!
तनिक मृदुल-मुस्कान कि जिसकी, करती जग को मस्ताना,
उसके अधरों के सङ्गम को, है यह लालायित लोटा॥

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

(११)

पुजता रसिक-समाज-मध्य नित जिसकी मस्ती का सोटा;
जिसकी अनुपम धज लख, फिरता प्रेमी-जग लोटा-लोटा !
बाँकी चितवन से करता जो, लोट-पोट लाखों का मन,
उसके स्वागत को आतुर हो, उमड़-रहा है यह लोटा ॥

❀ 'वे और उनका लोटा'

(१२)

वे मृणाल-सी मृदुल अंगुलियाँ, यह कर्कश, भारी लोटा;
क्या, न जँचेगा गिरि-सम गुरुतम, अमित-कष्टकारी लोटा ?
नहीं-कृष्ण-हित गोवर्द्धन-सा तृणवत् लघु वह दीखेगा;
कैसा है वैचित्र्य-भरा यह, नव-लीलाधारी लोटा ॥

(१३)

क्यों न फिरै उस कोमलता पर रसिक-जगत् लोटा-लोटा ?
कटि लचकी, शिर घूम-उठा, सुन सपने में लगते घोटा ।
रहे अहह ! 'सरकार' चार-दिन बेसुध विजया के रँग में;
सिर्फ़ नाम ले, छींट लगादी 'मौजी' ने लेकर लोटा ।

❀ यह उपशीर्षक पद्य सं० १२ से २६ तक का है ।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

(१४)

उन दृग-युगलों की लाली में लाता नव-लाली लोटा;
उस मृदु मादकता को, करता मृदुतर मतवाली लोटा।
'प्रेम-पात्र' को हेम-पात्र यह श्रीयुत द्विगुण बनाता है;
कर उस प्रिय हरियाली धज से संयुत हरियाली लोटा॥

(१५)

उस जीवन की काव्य-कुञ्ज में, है कल-कोकिल-स्वन लोटा;
उस जीवन-सङ्गीत-सङ्ग, है मृदु-मृदङ्ग-वादन लोटा।
उस जीवन के 'तरल-चित्र' में, रहता 'पृष्ठभूमि' बन यह,
उस जीवन-नाटक में है, यह वर विदूष्य-प्रहसन लोटा॥

(१६)

वह सु-वर्णयुत मधुराकृति, यह नव-सु-वर्ण-निर्मित लोटा
वह चंचल चरपरी प्रकृति, यह असित-मिर्च-मिश्रित लोटा।
चतुरानन की चतुराई के, हैं प्रमाण अनुपम दोनों,
वह मृदु मादक सरस मूर्ति, यह मृदु-मद-रसपूरित लोटा॥

(१७)

वे भोलापन दिखा-दिखाकर, यह जड़-तनु बन कर, लोटा;
रूप-सुधा वे तनिक चखाकर, सकृत सरस-मन कर लोटा।
रसिक-जनों का जी ललचाकर, करते हैं निजवश दोनों,
वे हैं छल-छद्मों के आकर, यह 'छल-छल' स्वनकर लोटा॥

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

(१८)

उनपर जा-जाकर, कर कर में, कल 'कलकल-छलछल' लोटा,
सिखलाता, मानों, छिप-छिपकर, करना जग से छल, लोटा।
प्रेमी-गण का सरस निवेदन, निष्ठुर बन, चुप पी-जाना
आया है उनकी आदत में, पी रस-मय, अवकिल लोटा॥

(१९)

जब उन मधुर-अधर-युगलों से करता यह सङ्गम लोटा;
जब उन मञ्जु-दृगों को, करता यह निज-हृदयङ्गम लोटा।
सहसा तभी 'रसिक'-रसना, यों बेसुध हो कह-उठती है,
'जड़ ही इसे समझते हैं जड़, यह रसमय जङ्गम लोटा'॥

(२०)

नयन सुबिम्बित हैं लोटे में, नयनों में बिम्बित लोटा;
अधर विचुम्बित हैं लोटे से, अधरों से चुम्बित लोटा।
इस अन्योन्य-प्रणय का वर्णन कवि कितना कर-सकता है?
वे हैं अवलम्बित लोटे पर, उन पर अवलम्बित लोटा॥

(२१)

गुपचुप, यह उनके नयनों में लाता नव लाली लोटा;
प्रकट-रूप में यद्यपि, देता नित-प्रति हरियाली लोटा।
यों, छिप-छिप कर रङ्ग बदलना, यही उन्हें सिखलाता है,
ठहरा, आखिर, 'घुटा-मँजा' यह मायावी, जाली लोटा॥

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

(२२)

बड़े उदर का, गोल बदन का, तिसपर गर्दन का छोटा,
कूट-कूटकर गढ़ा हुआ यह, घुटा-मँजा अति ही खोटा।
जो ऐसे हों, क्षमा करें वे, खरी बात है, किन्तु यहीं,
'बिन-पेंदी का उन्हें बनाता यह बिन-पेंदी का लोटा॥'

(२३)

उनसे दृग-भर देखा-जाना, खेल समझता यह लोटा,
उनके अधरों तक गति पाना, खेल समझता यह लोटा।
क्या कहना! झुकते-रहते हैं शिर अनेक जिनके आगे;
उनका शिर सौ बार झुकाना, खेल समझता यह लोटा॥

(२४)

वे जब-कभी झुकाते इसको, उन्हें झुकाता यह लोटा,
वे उँगली पर इसे नचाते, उन्हें नचाता यह लोटा।
बदला लेने में उनसे भी नहीं चूकता यह मानी!
वे इससे चुप हैं, तो, चुप हो उन्हें छकाता यह लोटा॥

(२५)

स्वागतार्थ वे इसे, उन्हें यह, शीश झुकाता है लोटा;
सरस देख वे इसे, उन्हें यह समुद नचाता है लोटा।
रसना-द्वारा निकल न जाये हृदय-सन्निहित प्रेम कहीं!
अतः, मौन रह, वे इसको, यह उन्हें छकाता है लोटा॥

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

(२६)

अहह ! नित्य भरता-रहता है, यह उनका पानी लोटा;
तिस पर भी सहता बेचारा उनकी मनमानी लोटा।
कुएँ-बीच डालें वे इसको, देकर गर्दन में फाँसी,
रह कर 'दास'-समान मौन, निज लखै धूल-धानी लोटा॥

(२७)

कुछ मत पूछो, 'पड़ा-हुआ है चुप यह किस कारण यह लोटा ?
क्यों न, प्रश्न पर एक शब्द भी करता-उच्चारण लोटा ?'
जग की सम्प्रति गति-विचित्र पर विवश देख कर अपने को;
मन मसोसता है, विस्मित हो, किये मौन धारण लोटा॥

× × × ×

(२८)

बैठा-दीखा, मित्र ! एक दिन मुस्टण्डा-मानव मोटा,
घुटी-खोपड़ी पर जिस नर के लगा-हुआ था हिङ्गोटा।
मिल-लोढ़ी के निकट मिल-गई उसकी एक विकट उपमा;
चमक-रहा था बिन पैंदी का, धरा-हुआ औंधा लोटा॥

(२६)

कर-सकता रस-युत रहने तक, क्षणिक अधर-सङ्गम लोटा,
पल-भर को, मद-भरा नाचता, कर दृग हृदयङ्गम लोटा।
स्वार्थ-जगत् के नश्वर सुख से बेसुध रखने को विधि ने,
जड़ ही रूप दिया इस जड़को, नहीं किया जङ्गम लोटा॥

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

(३०)

कभी न उठता प्रश्न यहाँ पर "कौन खरा है या खोटा ?
कौन धनिक अथवा निर्धन है, कौन बड़ा है, या छोटा ?"
पूछा-जाता यहाँ चाव ही, तोला-जाता प्रेम यहाँ,
साम्य-भाव के दिव्य पाठ को नित्य पढ़ाता यह लोटा ॥

(३१)

समय किसी का अच्छा हो, या भाग्य किसी का हो खोटा;
बढ़ै किसी का वैभव, अथवा रहे किसी को कुछ टोटा।
'मस्तराम' को क्या मतलब है, दुनिया के इन झगड़ों से ?
रहे सलामत यह सिल-लोढ़ी, रहे मुबारक यह लोटा ॥

(३२)

करै नृत्य नित सिलपर लोढ़ी, अथवा कूँड़ी में सोटा,
'धा-तिर-किट'-ध्वनि-युत मृदङ्ग वत् मृदुल-घोष करता घोटा।
साक़ी, पात्र, नीर, कर मिलकर, करै झाँझ-स्वन 'छप्-छम् छन्'
'तान' उड़ाते "मस्तराम" जी, वाद्य-रूप बनता लोटा ॥

(३३)

आयु साठ की है, तो क्या है ? अभी 'मस्त जी' हैं ढोटा,
पहनें सदा रेशमी टोपी, जिसमें लगा-हुआ गोटा।
अकड़-ऐंठकर अजब अदा से, बेढब 'दुलकी' चलते हैं,
लिये-हाथ में मोटा सोटा, डाले-कन्धे पर लोटा ॥

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

(३४)

मीठी खाँड़, चरपरी मिर्चें, असित-नमक खारी खोटा,
डाल कसैली सौंफ़-कासनी,'मस्त' लगाते हैं घोटा।
ले खट्टे फल, खीचें सिलपर कटुल संखिया की रेखा,
यों षट्-रस युत भव्य भङ्ग, वे पीते हैं भर-भर लोटा॥

(३५)

कभी 'मस्त' हर्षित हो नाचें, लेकर निज कर में सोटा,
कूदें कभी अखाड़े में वे, कस उमङ्ग से लङ्गोटा।
योगी, भोगी, करुणित, भय-युत, सघृण, रुष्ट, चकित होकर,
नवरस-भरे रँगीले ढोटा, पीते षट्-रसमय लोटा॥

(३६)

सदा सङ्ग-रखते 'मनमौजी' हरे बाँस का ही सोटा;
हरी वाटिका में लगवाते, हरी भङ्ग का वे घोटा।
हरे-हरे में ही रहते हैं 'हरे! हरे'! ही कहते हैं,
मन को हरा-भरा करते हैं, हरे नीर का पी लोटा॥

(३७)

लगता यह उपवन 'हिमगिरि'-सा, लगै रङ्गमय जब घोटा;
नित्य 'भगीरथ' के तप-सम, श्रम-करता कूँड़ी में सोटा।
धारें धार-सहित 'सुरसरि'-ज्यों, 'विजया' को 'भोले' मौजी,
'गङ्गावतरण' दिखलाता यों, कर भङ्गा-वितरण लोटा॥

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

(३८)

आशुतोष हैं, आशुरोष हैं अलबेले 'मौजी-' ढोटा,
उदर अमल है, मन उदार है, हृदय नहीं उनका छोटा।
अरि भी यदि जोड़ें आकर कर, वह भी आशिष पाता है;
परम मित्र पर भी, पर, चिढ़कर, तुरत तान-देते लोटा॥

(३९)

आये 'तानाशाह' यहाँ पर, खटकाते अपना सोटा;
'धन्ना सेठ' भङ्ग-गोष्ठी में खोल गये धन का पोटा।
भले-बुरे, सब मनमानी कर, अपने-अपने धाम गये;
पड़ी बिचारी यह सिल-लोढ़ी, धरा बिचारा यह लोटा॥

(४०)

स्वर्ण-वर्ण, सुन्दर, सुषमामय, है तेजस्वी यह लोटा;
'विजया'-वितरण में उदार अति, परम-मनस्वी यह लोटा।
निज प्रिय-मित्र 'मस्त-मौजी' की प्रबल प्रतीक्षा में प्रतिदिन,
रहै डटा उलटा एकासन, अटल-तपस्वी यह लोटा॥

(४१)

'यह किस शिला-खण्ड की कूँड़ी, किस वन-तरु का यह सोटा?
पात्र बनें किस खनिज धातु के, कौन लगाता है घोटा?'
धन्य 'मस्तजी', किया जिन्होंने 'नदी-नाव-संयोग' यहाँ!
पावेंगे वे इस उपकृति पर नित्य भङ्ग, भर-भर लोटा॥

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

(४२)

'छात्रालय' सम है समता-प्रिय यह उपवन, यह परकोटा;
करता व्यय में होड़ यहाँ भी धनिकों से निर्धन-ढोटा।
माता, पिता, गुरू आदिक की चिन्ता दोनों जगह नहीं;
कम न तनिक भी है 'टी'-कप से मिस्टर मौजी का लोटा॥

(४३)

'मधु'-वादी बादी बढ़ने से, हुआ 'नागरी'-तनु मोटा;
किन्तु, शक्ति-गौरव में उसके, दीखा दिन-दूना टोटा।
यह अकाण्ड-ताण्डव चुप रह जब, सह न सके 'मौजी-बाबा';
दौड़-पड़े लेकर करमें तब, शिव-प्रिय बूटी का लोटा॥

(४४)

कहैं 'मस्त' चोटी से 'चोटा', बोटी से कहते 'बोटा';
कहैं लँगोटी से 'लङ्गोटा' और पोटली से 'पोटा'।
समालोचको ! व्यर्थ न बिचको, यह उच्चारण मर्दाना;
हैं मर्दाने 'मौजीबाबा', मर्दाना उनका लोटा॥

(४५)

यह लेखक की ललित-लेखनी, लोढ़ी नहीं, न यह सोटा;
लिखी-गई हैं पद्य-पंक्तियाँ, कोरा नहीं लगा घोटा।
काग़ज़ है यह, काग़ज़, मित्रो ! मत समझो कूँड़ी, या सिल;
साहित्यिक-रस भरा ग्रन्थ यह, 'विजया'-भरा न यह लोटा॥

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

"आप विश्वास करें"

नहीं हँसी की बात—आप विश्वास करें।

(१)

निर्भय हो, 'कविराज' गा-गये निपट-नग्न-शृङ्गार को;
समझदार भी समझ न पाये उस 'गाथा' के सार को।
बोले वे कि, "मधुर शैली में ये दार्शनिक विचार हैं;"
जाना सबने किन्तु, 'वासना-मय' कोरे उद्गार हैं,
चली न उनकी घात—आप विश्वास करें॥

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

 Digitized by eGangotri

(२)

बेकारी में 'पत्र-कारिता'—थी तो अनुपम सूझ ये;
थे परन्तु, अल्हड़, अध-कचरे, अनुभव-हीन, अबूझ ये।
कई 'पत्रिका' पार लगादीं, देखी कुछ दिन जेल भी;
नाम और 'नामे' की धुन में खेले जो-जो खेल भी,
खाई उनमें मात—आप विश्वास करें॥

(३)

नक़ल, रौब, तिकड़म से, आई 'ऐम्-ए' डिगरी हाथ में;
किन्तु 'नकल' की अकल, एक पग चली न उनके साथ में।
रहे 'फ़िस्स' प्रतियोगितादि में, फ़िसल-गिरे हर चाल में;
अब, घर छोड़, 'चैन की बंसी' बजा-रहे सुसराल में,
मस्त पड़े दिन-रात—आप विश्वास करें॥

(४)

चतुर 'सुधारक' जी ने ऐंठो ऊँची रक़म दहेज़ की;
अब लज्जा तज, गाते महिमा त्याग और 'परहेज़' की।
कह-दो उनसे आज, कि "जनता नहीं अबल, अनजान है;
उसके ही बल पर तो, प्रियवर ! बढ़ा आप का मान है,
हुए विश्व-विख्यात"—आप विश्वास करें॥

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

(५)

बना धर्मशाला 'लालाजी' खूब 'कटौती' जोड़कर,
सीधे, गये-सिधार स्वर्ग को, ठाठ पुत्र पर छोड़कर।
लल्ला जी को शोक-डाक में मिला 'मृत्यु-कर'-तार जब,
"ऐटम-युगी' सहानुभूति का उनको ऊँचा प्रहार, तब-
रोये 'हा पितु-मात !'—आप विश्वास करें॥

(६)

सुनकर नव निर्माण-योजना, हर्षे ठेकेदार सब—
"देकर 'भेंट' 'बड़े लोगों' को, सध-जायेंगे कार सब।"
बाँधे ऊँचे बाँध आपने, चूना देकर प्रेम से—
पड़े दरारें ! भुगते जनता ! आप बैठिये क्षेमसे;
भेद न होगा ज्ञात—आप विश्वास करें॥

(७)

'क्लर्क' सोच में नतमुख बैठा-देख रहा सब खेल है;
घटती-आय, बढ़े-व्यय की, नित जिसपर रेलम-पेल है।
जनता-तरणि-कर्णधारों को, किन्तु, कहाँ अवकाश है!
जो, उसकी सुन सकें, होरहा जो अति खिन्न, हताश है,
विमल-वसन, कृश-गात—आप विश्वास करें॥

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

(८)

सबसे भला छात्र-जीवन है—हँस-लो, खा-लो, खेल-लो;
बकनें दो बकनेंवालों को, डाल कान में तेल लो।
'मधु-मय', सुन्दर, स्वर्ण-योग यह, आप सभी हैं जानते;
वे भी क्या हैं! जो कि 'समय की हवा' नहीं पहिचानते!—
'महामन्त्र' यह, तात!—आप विश्वास करें।
बड़ी, 'पते की बात!'—आप विश्वास करें॥

*

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

"वानरो वा, नरो वा"

बैठते हैं ऊँचे, बड़ी इनकी सभी में पूँछ,
लम्बी है पहुँच, भय किसी से न खाते हैं;
निपट निःशङ्क हो, कहीं भी कूद-पड़ते हैं,
बल अपने का कल-कौतुक दिखाते हैं।
खाते हैं कुलाँच, पग-पग पै उछलते हैं,
दाँत दिखलाते, कभी आँख से डराते हैं;
"वानर हैं, वा, नर?"—न पूछो, इन्हीं लक्षणों में-
नेता, अभिनेता, पत्रकार, कवि आते हैं !!!

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

"सब-गुन-भरे"

प्रकृति ने 'चन्दा' गोल करिकें दिखायौ एक,
तुमने अनेक चन्दा, राति-दिन, 'गोल' करे;
कहि-गये कृष्ण, "जय, हार में प्रसन्न रहौ."
'जय !', 'हार' ही सों होत हृदय तुम्हारे हरे।
बनि 'स्वयं-सेवक,' स्वयं की ही करत सेवा,
हौ तुम, 'दया-निधान !' सब ही 'गुननि-' भरे;
"हरे-रामा ! हरे रामा !" त्यागि, तुम्हें लागी 'धुन'—
"हरे नामा ! हरे नामा! नामा! नामा ! हरे-हरे!!!"

❋

शब्दार्थ—चन्दा =(१) चन्द्रमा (२) सहायतार्थ प्राप्त धन। जय= (२) जीत (२) जयघोष !। हार (१) पराजय (२) माला। हरे=हर्षित। नामा=रुपया-पैसा। 'हरे-हरे'=सौ-सौ रुपयेवाले नोट।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

'मत-दान'

(१)

अन्न-दान, भूमि-दान, कन्या-दान, धेनु-दान,
गज-दान, अश्व-दान, और रथ-दान है;
स्वर्ण-दान, रौप्य-दान, रत्न-दान, वस्त्र-दान,
विद्या-दान, द्रव्य-दान, और बलि-दान है,
वाक्य-दान, वर-दान, क्षमा-दान, श्रम-दान,
जल-दान, पिण्ड-दान, और दीप-दान है;
दान के न दानों से है नेताजी को नाता आज,
उनको तो अभिमत एक 'मत-दान' है ॥

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

(२)

इत्र-दान, आबदान, शमादान, गुलदान,
अगर-लोबानदान, और धूपदान, है;
खानदान, पानदान, मिरच-मसालेदान,
रायते-या-सागदान, और तोशदान है।
क़लम - दावातदान, साबुन - सिंगारदान,
चूहेदान, कूड़ेदान, और पीकदान है;
दान के न दानें से है नेताजी को नाता आज,
उनको तो अभिमत एक 'मतदान' है ॥

(३)

देरहे थे सूमजी आशीष नेता-गण को, कि,
"युग-युग जियो, राज्य इन्द्र के समान करो !"
पण्डित, पुजारी और भड्डुरी, भिखारी आदि,
घबराके कहते थे, "कृपा, भगवान ! करो।"
पूछा जो किसी ने उन दोनों से, कि "क्या है बात ?"
बोल उठे सभी, "नेंक, उधर तो ध्यान करो;
टोलियों की टोलियाँ हैं, घर-घर घूम-रहीं;
चारौं ओर धूम हो रही है, "मत, दान करो ॥"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

'मत-दान' के मतवाले—

चुंगी, ज़िलाबोर्ड, ग्राम-पंचायत आदि आदि—
चाहते हैं, सभी के सदस्य बनजायें वे;
पाठशालाओं से ले के विश्वविद्यालयों तक,
जाके अधिकार-धाक अपनी जमायें वे।
लोक-सभा, राज्य-सभा के तो फेर में ही, फिरें-
'ताते दूध बिल्ली के समान,' मुंह-बाँयें वे;
चढ़ी भूत-डङ्किनी-सी उनपै चुनाव-धुन,
कैसे जनता के सुख-दुःख सुनपायें वे?

*

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

अनवकाशी नेता—

बड़ी योजनाओं पै प्रकाश डालना है उन्हें,
'वन-महोत्सवों,' का महत्त्व बतलाना है;
श्रमिकों, बेकारों, 'हरिजनों,' 'पुरुषार्थियों' को
अति ही जटिल गुत्थियों को सुलझाना है।
भूमिदान, श्रम-दान, द्रव्य-दान आदि-हेतु,
लोगों के हृदय में उमङ्ग उपजाना है;
कष्ट-कथा आपकी वे कब सुनें, कैसे सुनें ?
उन्हें अभी 'कार'-द्वारा दौरे पर जाना है।

*

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

शोषण का भूत—

नेता-गण 'स्यानें' वक्तृतायें झाड़, हार-गये,
मन्त्र, भी स्वतन्त्रता का हो गया असार है;
'जयहिन्द,' 'वन्दे' आदि गण्डे असफल हुए,
थोथा हुआ पास का 'तिरङ्गा' हथियार है।
आप हैं अचेत, सभी लोग अति चिन्तित हैं,
'जननी' दुखी है, दुखी 'दीन'-परिवार है;
शोषण का भूत न 'उतारे' से उतरता है,
डङ्किनी विलासिता की शिर पै सवार है !!

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

उन्मुक्त किसान !—

(१)

देश के किसानों ! सभी मिलके मनाओ मोद,
    बड़ी कठिनाई से घड़ी ये शुभ आई है;
भारत को मुक्त-हुए कई वर्ष बीते जब,
    तब, किसी भाँति, आपने भी मुक्ति पाई है।
हुई नष्ट सारी कष्ट-कारी ज़मींदारी प्रथा,
    हृदय में सुख की लहर लहराई है;
भूमि-अधिकारी 'भूमिधर' बन-गये आप,
    फिर-रही चारों ओर आपकी दुहाई है ॥

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

(२)

'उत्तम है खेती,' कह-गये बड़े-लोग यही,
किन्तु, यह सीख, कहीं भूल मत जाना तुम;
भूमि पै मिला है तुमको जो अधिकार आज,
भली भाँति उसको उमङ्ग से निभाना तुम।
किन्हीं ज़मींदारों के समान मद-मत्त होके,
धन को विलासिता में व्यर्थ न बहाना तुम;
शुद्ध सेवा-भाव से, अथक-श्रम-द्वारा सदा,
अधिक-से-अधिक अनाज उपजाना तुम॥

(३)

ठीक ही है—'काँगरेस'-राज्य की कृपा से तुम,
छूट-गये ज़मींदार-बौहरों के डर से;
रहना सचेत, किन्तु, धन के अपव्यय से,
हाथ धो न बैठो, कहीं घूरे और घर से!
भूमि है तुम्हारी, ज़मींदार की रही न आड़,
द्रव्य दिये-बिना, न हटेगा बोझ सर से;
समय पै चूकने की छोड़ के पुरानी बान,
अब, सरकारी 'कर' देना मुक्त-कर से॥

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

अ-छात्र 'छात्र' !

काले अक्षरों को गिनें भैंस के बराबर जो,
शिष्टता न जानें, किस चिड़िया का नाम है;
फिरते स्वच्छन्द छैल, जैसे बिना-नाथ बैल,
बे-नकेल ऊँट, या कि घोड़ा बे-लगाम है।
मेलों में मचलते हैं, चलते-बिचलते हैं,
छेड़-छाड़ छोड़, जिन्हें दूसरा न काम है;
ऐसे 'सूट'-धारियों अ-छात्र 'घासलेटियों' ने
किया, आज, छात्रों का समाज बदनाम है॥

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

लीजिये, यह हुआ !

(१)

आप तो स्वराज देके, सात-सिन्धु-पार गये,
भीड़ 'जी-हुजूरों' की यहीं पै खड़ी रह-गई;
साथ ले-गये न इन भोले अनुगामियों को,
दृष्टि इनकी हा ! आप पै ही गड़ी रह-गई।
रही सिगरेट यहाँ राष्ट्र-द्रव्य फूँकने को,
पापमयी असुरा 'सुरा' भी अड़ी रह-गई;
भारत के दुर्दिनों की स्मृति हरी रखने को,
लज्जा-हीन कोट-पेंएट यहीं पड़ी रह-गई ॥

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

 Digitized by eGangotri

(२)

आपके गुणों पै नहीं लोग यहाँ जाते, किन्तु-
बाना आपका ही अपनायेहुए बैठे हैं;
समय का पालन कभी न कर पाते, किन्तु-
'रिस्ट-वाच' हाथ में सजायेहुए बैठे हैं।
खेल-कूद से न तन-तेज को बढ़ाते, किन्तु-
क्रीम से कपोल चमकायेहुए बैठे हैं;
घर की सफ़ाई में न ध्यान भी लगाते, किन्तु-
मुँह को सफ़ाचट बनायेहुए बैठे हैं॥

(३)

लोग कहा-करते हैं, "बारह बरस तक-
धन या दरिद्रता की गन्ध नहीं जाती है;"
दासता गए तो भला! कितने हुए हैं दिन!
तभी, वह मन से निकल ही न पाती है।
दास-वेशधारी 'शिष्ट' जनता तो आज तक
अपनी ही संस्कृति को नहीं अपनाती है;
ऊँची मूँछ की है भगवान ने भले ही, किन्तु-
मुँछ-मुण्डता में कमी दृष्टि नहीं आती है॥

५

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

(४)

देश में विचारकों की कमी नहीं है, परन्तु-
जानें किस ध्यान में वे आज रह-रहे हैं?
गिर-रही नित्य दशा राष्ट्र-धम, संस्कृति की,
किन्तु, वे सभी ये चुपचाप सह-रहे हैं।
जानते-हुए भी अनजान-बने बैठे हैं, या-
कोरी कल्पना की धार में ही बह-रहे हैं;
'बादों' के विवाद-द्वारा फूट-बीज बो रहे हैं,
एकता-सुमति की न बात कह-रहे हैं॥

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

'प्रगति-युग' की पुकार !

ज्ञान नहीं—'विज्ञान' कर-रहा नवयुग का निर्माण है;
पिता मूर्ति है हाड़-मांस की; देव नहीं, पाषाण है।
भगिनी-पत्नी में न प्रकृति-कृत कोई भेद-विधान है;
सुनो 'प्रगति-युग' की पुकार अब—'नर-पशु एक-समान है ॥'

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

वैज्ञानिक से—

'अणु-वीक्षण' 'दूर-वीक्षणों' तक सीमित है तेरी छानबीन;
'किससे कहते हैं भावुकता ?'—तू क्या जानें, ओ हृदय हीन !

(१)

वह चित्र प्रवासी-प्रियतम का, है विरहिणि का जीवनाधार;
करता है शीतल हृदय सदा, वह प्राणाधिक प्रेमोपहार।
वह 'प्रेम-पात्र' का प्रणय-पत्र, है प्रेमी की निधि एक मात्र;
दर्शन, पारायण, में जिसके, रहता निमग्न वह अहोरात्र।
क्या अन्य चित्र, या पत्र सभी,
हो-सकते उनके तुल्य कभी ?
ओ भौतिकता के भक्त ! बोल,
अपने वैज्ञानिक चक्षु खोल !
'कागज़-कागज़ हैं सभी एक,' कह कर चुप है तेरा विवेक;
भव का रहस्य है भाव—अरे ! तू नहीं समझता, बुद्धि-हीन !

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

(२)

वर्षों के बिछुड़े-हुए, अहह ! मिल गये हृदय दो अनायास;
सोती-संस्मृतियाँ जाग-पड़ीं, प्राणों ने ली सुख-पूर्ण श्वास।
नयनों ने पलक-प्यालियों में, पल-भर में प्रेम-सुधा भरदी;
जिसकी दो बूँदों ने गिरकर, उर-उर्वी फिर उर्वर कर-दी।
वह तरुणी तन, धन, जन खोकर,
खल-दल से सन्तापित होकर,
सूनी-कुटिया के कोने में,
सुख ढूँढ़ रही थी रोने में।
उसको ज्यों-त्यों, मर कर, जीकर, मिल पाया एक अश्रु-सीकर;
हैं, किन्तु तुझे केवल दृग-जल, आँसू दुखमय, या प्रेमलीन।

(३)

वह अमरवीर की पुण्य-मूर्ति, भरती है जग में नव-स्फूर्ति;
वह इष्ट-देव की दिव्याकृति, करती जन की अभिलाष-पूर्ति।
उपजाती श्रद्धा, शान्ति, प्रेम, भावुक मन में जो सब प्रकार,
गद्गद् हो सहृदय भक्त जिसे, करता है सादर नमस्कार,
उसको, हा ! तेरी बुद्धि प्रखर
बतलाती है केवल पत्थर !
गुरु-जन के प्रति तुझ में न मान
हैं अस्थि-मांस वे मूर्तिमान।
भगिनी-पत्नी का भेद-ज्ञान, 'विज्ञान' न सकता कभी जान।
तुझको तो नर केवल पशु है; पर, यह न विबेचन समीचीन।।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

(४)

भावुक 'आस्तिक' कहता पुकार, "है ब्रह्म सार, सब जग असार;"
अस्तित्व ब्रह्म का किन्तु, तुझे, है काव्य-कल्पना का विकार।
ओ कल्पनारि ! वास्तव्य-भक्त ! कल्पित हैं अङ्क, विन्दु, अक्षर;
कल्पित भाषात्मक शब्द सभी, 'विज्ञान' स्वतः जिन पर निर्भर।
ब्रह्मानुरक्ति है जग-विरक्ति,
'विज्ञान'-भक्ति है स्वार्थ-सक्ति;
हो स्वार्थ-परायण ही मानव,
मानवता तज, बनता दानव।
तू नहीं जानता, ओ अजान ! जीवन है कितना मूल्यवान !
हैं ये अनुपम नर-रत्न तुझे, केवल कौड़ी के तीन-तीन !!

*

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

मुझे हँसी आती है—

फैला नाथ ! विश्व में प्रकाश तेरा; तोभी, लोग;
जानें क्यों, अँधेरी कन्दराओं में विहरते ?
मानते-हुए भी आत्म-हनन को पाप, हन्त !
व्रत से वे तनु कृश-करते न डरते !
सर्वव्याप्त है तू, तोभी सबसे अलग जा के-
जङ्गलों में, जाने किसहेतु वे विचरते ?
सम्मुख सदैव है तू, तोभी क्यों, न जानें, लोग-
देखते-हुए भी तुझे आँखें बन्द करते ?

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

विपत्ति की बड़ी बहन !—

यथार्थ जानिये इसे, असत्य है न यह कहन—
'सहानुभूति बन-गई विपत्ति की बड़ी बहन !'

(१)

अनेक वर्ष में जहाँ-कहीं कि आप जायँगे;
वहीं कृपालु-जन प्रथम कथन यही सुनायँगे,
कि "मित्र ! आप पूर्ववत् न स्वस्थ दृष्टि-आरहे।"
सरस, असार वाक्य यह समझ न आप पायँगे,
बनायँगे नितान्त यों, अशान्त, भ्रान्तिमान मन ॥

(२)

किसी प्रकार, मानिये कि, चार छींक आ गईं;
सभी, हकीम-वैद्य बन, दवा बतायँगे नईं।
यही नहीं—स-प्रेम-बल पिलायँगे पृथक-पृथक्;
परन्तु, हानि देखकर, हँसी उड़ायँगे वही,
कि, "ज्ञान-सिन्धु ! आप क्यों, गये विवेक-शून्य बन !"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

(३)

समीप रोग-ग्रस्त के, हितेच्छु जो कि जायँगे,
वही, प्रलम्ब-प्रश्न कर, अधिक उसे सतायँगे;
लगे-हकीम-वैद्य को छुड़ायँगे, अयोग्य कह,
घनिष्ट मित्रता दिखा, वृथा व्यथा बढ़ायँगे;
महा-अनर्थ, व्यर्थ यों करें विशिष्ट शिष्ट जन ॥

(४)

महानुभाव ! आज का 'प्रगति'-प्रभाव देखकर,
हृदय-प्रदेश तज, बसी सहानुभूति जीभ पर;
असार'शब्द-प्रीति,' है प्रतीति के न योग्य अब;
अनीतिमय परम्परा बनी महान-हानि कर।
सदुक्ति सत्य आज है–'सम्हल-सम्हल धरो चरन ॥'

(५)

समय, 'प्रगति-प्रधान' की यही प्रबल पुकार है;
यही सहानुभूति का यथार्थ सत्य सार है,
कि, "लाख दीजिये वचन, न ख़ाक कार्य कीजिये";
बना विमूढ़ आज वह मनुष्य, जो उदार है;
न, मित्र ! द्रव्य दीजिये, न शत्रु कीजिये सृजन ॥

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

"स्वास्थ्य'-चर्चा !!—

(१)

नित्य पानी मिलै यहाँ नल का,
 और, आटा पिसा-हुआ 'कल' का ।
घी यहाँ शुद्ध 'घासलेटी' है,
 दूध मक्खन-कढ़ाहुआ हलका !

(२)

पाउडर से सफ़ेद है चीनी,
 और शर्वत पवित्र 'सैक्रीनी' ।
हैं फटे-तेल की पकौड़ीं जो,
 तो, मिठाई विचित्र रङ्गीनी ॥

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

(३)

तंग गलियाँ हैं, सीलदार मकान,
गातीं चुंगी का नालियाँ, गुणगान,
धूल सड़कों की है, 'मिलों' का धुआँ,
बढ़ती वेश्याओं से बाज़ार की शान ॥

× × × ×

(४)

दुबला फ़ैशन से, तन बनाइयेगा,
नित सिनेमा को आप जाइयेगा ।
स्वास्थ्य-चर्चा, कि सदाचार की बात
और जाकर कहीं सुनाइयेगा ॥

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

चित्त-चोर से—

करते पवित्र हो सदैव पतितों को तुम,
दीनबन्धु नाम से प्रसिद्धि निज पाते हो;
आशा अनरीति की तुम्हीं से करैं कैसे, जब-
गीता में भी पाठ सदाचार का पढ़ाते हो।
कोष में तुम्हारे नहीं दीखती कमी भी, क्योंकि-
दान-देते विश्व को, न नेंक सकुचाते हो;
लीलाधाम ! यह तो बताओ, किस-हेतु, फिर-
भोले हृदयों के लिये चोर बन-जाते हो ?

*

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

ऐंड़े पर पकड़े-गये !—

मेरे जिस हृदय में बसते विरिञ्चि-देव,
सङ्ग गिरिजा के, राजते हैं शम्भु गिरिराज;
विष्णु भी जहाँ पै कमला-सहित शोभित हैं,
पालते जो सृष्टि, पूर्ण करते सकल काज।
"हृषीकेश" रहती समोद शारदा भी जहाँ,
सुख के जहाँ पै विद्यमान हैं असंख्य, साज,
श्याम ! मुरली की दिव्य-ध्वनि से लगाते-सेंध,
पकड़-लिया है तुम्हें उसी को चुराते, आज !!

*

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

समझ में नहीं आता !—

क्यों, निशि में, नभ-जौहरी !
तू उडुगण-मणि-माल
दिखा उलूकों को रहा,
सोते जब कि मराल ?

*

झूठा सत्य !—

"तम-साड़ी तारों-जड़ी
पहन, खड़ी नभ-बाल"
यह सच कथन उलूक का,
मानें झूठ मराल !!

*

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

कैसे मानें !—

टपकत, चलत, बहत सुनें, नाक, पेट अरु कान।
लखे न—कैसें लेंइ फिर, बात साँच यह मान!

*

"सच्चो बात"—

जो मोहि बूझौ, कहौं बात साँचै—
रामायनें आँधरौ नाहिं बाँचै,
भीरून में नाहिनें जुद्ध माँचै;
ना भैंसि के सींग पै ऊँट नाँचै !!*

*

* यह "भैंसि के सींग पै ऊँट नाँचै" समस्या की पूर्ति है।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

चटनी—

प्रथम धर्म 'आचार' हटि, भयौ आय अब 'अर्थ'।
का अचरज, जो ह्वै-रहे सब वर्णाश्रम व्यर्थ ॥
कोटिक, लक्ष, सहस्र, शत, इमि करिकें क्रम चारि।
कीजिय वर्ण-विभाग अब आर्थिक-मति निरधारि ॥

× × × ×

बड़े भाग्य, स्रम करि मिलै, साधु-जनन कौ सङ्ग।
लेहु 'सिनेमा' सों सहज शिक्षा, सहित-उमङ्ग ॥
'प्रेम-प्रेम' चिल्लात हैं, सबहि सिनेमा-खेल ।
खेल रचाये प्रेम के, समुझि प्रेमकों खेल ॥

× × × ×

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

नाहिं पतिव्रत-धर्म की शिक्षा में कछु सार।
अब, विवाह-विच्छेद सों ह्वै-है पूर्ण सुधार॥

× × × ×

सूखे पहलें ही पिता, लखि दहेज कौ हाल।
बिटिया चली बटाइबे, अब जमीन, घर, माल॥

× × × ×

धीरज दुखिहिं बँधाइ, छिन, देत सुखीहिं 'बधाइ'।
हिय रूखौ, रसना सरस, धनि ! नव 'सभ्य'-सुभाइ !!

× × × ×

वायुयान चढ़ि आजु-दिन, 'छय'-रोगी नर-सूर।
करत 'बम्ब' की वृष्टि सों, मल्लन के गढ़ चूर॥

× × × ×

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

सुता, जननि, पतिनी, भगिनि, पिता, पुत्र, पति, भ्रात ।
लखै न जड़ विज्ञान कछु, तजि नर-नारी नात ॥

× × × ×

विप्र-रूप धरिबौ सरल—तिलक लगाऔ माथ ।
डोरा डारौ कण्ठ में, पोथीं पकरौ हाथ ॥

× × × ×

शिष्ट मिष्ट-भाषी बनों, सतत जगत के माहिं ।
'माता' कहियति पर-त्रिया, 'बाप-लुगाई' नाहिं ॥

× × × ×

वे जन दीवट-सम अबुध, जिन-सिर चढ़ि नर-और ।
चमकत चहुँ-दिसि दीप-ज्यों, बनि बुध-जन-सिरमौर ॥

*

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

हार से जीत—

तुम पर निज को सभी प्रकार हार कर,
अनमोल प्यार ये तुम्हारा हम जीते हैं,
होती है विजय प्रणयाङ्गण में हार से ही
भरते हैं वे ही यहाँ, होते जो कि रीते हैं।
पीते मधु-प्याला रहें, लोग मधुशाला-बीच,
प्रेमामृत हमतो तुम्हारा नित्य पीते हैं,
'मरते रहें' वे 'मरते हों' तुम पर जो कि,
हम तो तुम्हें ही, नाथ ! देख-देख जीते हैं॥

*

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

गुरु-सेवा—

(१)

*एक कहानी बहुत पुरानी सुनिये, प्रियवर ! देकर ध्यान;
किन्हीं गुरु के दो चेले थे निपट गँवार, उजड्ड महान।
गुरु के आश्रम में रहते थे, सेवा करते थे दिन-रात;
सीधे थे वे बहुत, विदित थी उन्हें न कोई छल की बात ॥

(२)

एक-दूसरे से बढ़कर वे गुरु का करते थे सत्कार;
पर, ऐसी होड़ा-होड़ी में प्रायः हो जाती थी रार।
नित्य-नित्य का कलह देखकर, गुरु ने करके बहुत विचार,
आधा-आधा काम बाँटना उनके लिये किया स्वीकार ॥

* कहानी पुरानी ही है, यहाँ उसे केवल पद्य-रूप दे दिया गया है।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

(३)

आश्रम के दक्षिणी भाग का बड़े शिष्य पर सौंपा भार;
उत्तर दिशि के, त्यों, प्रबन्ध को छोटा शिष्य किया तैयार।
निज दायें अङ्गों का सेवक, किया बड़े को उसी प्रकार;
छोटे को दे-दिया हर्ष से बायें अङ्गों पर अधिकार ॥

(४)

एक दिवस, गुरुवर सोये थे, सुख से दोनों पाँव पसार;
निद्रा के वश, दैवयोग से, दी तन की सुधि सभी विसार।
बायाँ पैर चढ़ा दायें पर—बड़े शिष्य ने लिया निहार;
उसे तुरन्त उतर-जाने को दी आकर उसने ललकार ॥

(५)

बोला वह, "क्यों रे मूरख पग! तुझे नहीं है कुछ भी ज्ञान;
बड़े शिष्य वाले पग पर चढ़, करता है उसका अपमान!"
किन्तु, न उसे उतरते-लखकर, मन में करके क्रोध महान;
लाठी लाकर जड़-दीं उसमें पाँच सात, हो निपट अजान ॥

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

(६)

ऊँचे स्वर से गुरू पुकारे, जिसको सुनते ही तत्काल;
छोटा शिष्य दौड़कर आया, लखा वहाँ पर ऐसा हाल।
आपे से बाहर हो, उसने, किया न कुछ भी सोच-विचार,
बड़े शिष्य वाले पग में दी ख़ूब कड़ी लट्ठों की मार॥

(७)

बायें तन पर किया बड़े ने, छोटे ने दायें पर वार।
गुरुवर हुए अचेत सर्वथा, बहने-लगी रक्त की धार॥
हो-हल्ला सुन पाड़-पड़ौसी दौड़-दौड़ आये गुरु-धाम;
चेलों से गुरु को छुड़वाना बहुत कठिनता का था काम॥

(८)

ज्यों-त्यों कर, फिर भी, वे उनसे बचा-सके गुरुवर के प्राण;
तनिक और यदि वे रुक-जाते, तो करते गुरु महाप्रयाण।
हुए सचेत चार दिन पीछे, चेते चार मास के बाद;
मिला मूर्ख चेले करने से, उन्हें भूल का यह कटु स्वाद॥

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

"विजया-वाटिका"—

दुनिया के झञ्झटों से न जिनको कुछ काम,
पी भङ्ग, रहें मस्त, ईश का ले नाम;
बिन-सूँड़ के गणपति हैं जो चौबे-बाबा,
गणपति के सङ्ग, है उन्हें सप्रेम प्रणाम।

× × ×

(१)

आ, रे। यहाँ, ओ चौबे लाल के ढोटा!
बज-जाने दे आनन्द से कूँड़ी-सोटा;
लगने-दे तू 'रगड़ा' 'चकाचकी' का तनिक,
बे-लाग चढ़ाने दे भङ्ग का लोटा ॥

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

(२)

यह तीव्र विमानों के मान हरती है,
तारों के सङ्ग क्षण में जङ्ग करती है;
पाताल में जँचता है इन्द्र का आसन,
चढ़ रङ्ग पै इतनी उड़ान भरती है॥

(३)

'धरणी' भ्रमै, कि सूर्य' इसी पर बस, यार !
लड़तेहैं क्यों भूगोल के वे ठेकेदार ?
दोनों ही घूमते हैं—न यदि हो विश्वास,
देखो, गले में भङ्ग के गोले को उतार॥

(४)

सावन बरस में आता है बस, एक ही बार,
करती हरा, धरा को तभी मेघ की धार।
मन-मत्त मनाता है नित यहाँ सावन,
हरियाली बरसती है गले में प्रतिवार॥

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

(५)

विजया-तरङ्ग में विजय-तुरङ्ग पै चढ़,
जाते हैं बात-बात में झट म्यान से कढ़—
ठाकुर ! तुम्हारा एक दशहरा क्या है ?—
जग जीतते दिन भर, गिरा के बात के गढ़ ॥

(६)

दीखी 'लहर' में दिन में अमावस की रैन;
चमके करोड़ों दीप, तिल-मिले, जो, नैन;
ठोकर से बचे-धन्य है प्रभु को !-फिर भी-
अब-तक नहीं ली ऐसी दिवाली-बिनचैन ॥

(७)

नर नित्य की होली का मर्म वह जानें,
रक्खै जो लाल नेत्र, चकाचक छानें;
बातों में कुशल जीभ को देता न लगाम;
है धूलिया-अलमस्त जो 'सोलह-आने' ॥

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

(८)

इस दूरबीन को लगाके आँखों पर,
लखते हो ज्योतिषीजी ! क्या नभ में पत्थर ?
तारे, जो, तुम्हें देखना-हो दिन के बीच,
तो, आज चढ़ा-जाओ एक चुल्लू-भर ॥

(९)

लोढ़ी से घोंट सारा मज़हबी झगड़ा,
लोटे में निचोड़ा निचोड़ है तगड़ा !
साफ़ी ने 'फ़िलसफ़ा' की सफ़ाई करदी,
'रगड़े' ने रगड़-डाला 'दुई' का रगड़ा ॥

(१०)

बादामों से होता जो कभी दूध का सङ्ग,
तो, दीखता उस-दम है निराला कुछ रङ्ग ।
उर-मध्य उठाती है चौगुनी ही उमङ्ग—
गङ्गा की तरङ्गों से वो भङ्गा की तरङ्ग ॥

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

(११)

चाहो, तो करामात लो, बाबू! ये निहार,
पत्थर का वो चश्मा तो नाक से दो-उतार,
'विजया' की पहिन 'ईंट की ऐनक', देखो-
पैरों तले आकाश, शीश पर घर-द्वार॥

(१२)

मन-मौजियों को छेड़ो न, गायक-सरकार!
'धुन' के हैं यहाँ रैन-दिवस ऋतु-त्यौहार!
देते कभी अलाप सबेरे ही 'विहाग'!
गा-देते कभी, मस्त हो, होली पै 'मलार'!

(१३)

मस्तों का मार्ग नापने में उफ़! भरपूर,
सौ-जन्म भी समरथ न गणित का कोई शूर।
बद-रङ्गी में घर दीखता छः-सौ फ़लाङ्ग,
चढ़ रङ्ग पै; 'रंगून' भी नहीं कुछ दूर॥

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

(१४)

'ऑप्टीशियन' जो, आ यहाँ दो-चार गये,
मस्तों की दृष्टि जाँचने में हार-गये—
सौ कोस का तिल-ताड़! निकटगज-भुनगा?
आये थे शेर-मारते, झख मार गये ॥

(१५)

डण्डा चलाया, चढ़, जो, रँग-चकाचक में,
चिड़ियों के नहीं दाँत बचे मुँह-तक में।
खरहे के सींग उड़-गये! कवि जी हैं गवाह;
नर-पूँछ छिपी 'डारविन' के मस्तक में ॥

(१६)

यूरूप से यहाँ आये भङ्ग के कुछ 'फूल',
बिन-धोये युवक पी-गये उनको कर भूल।
ऐसा नशा चढ़ा, कि उतरता ही नहीं,
बन-बैठे हैं 'एबिल', वो, बाप को कह 'फूल' ॥

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

(१७)

मस्तों ने है 'स्कीम' एक की तैयार,
मेम्बर ऐसेम्बली में उस पै करलें विचार;—
खुल-जायें शहर-शहर में 'विजया' -शाला,
'बेकार' यों, 'विजया' की 'कार' पर हों सवार ॥

(१८)

"मेंहदी हरी से हाथ लाल !" प्रिय बोली,
"प्रिय ! देखो ये सावन के बाद ही होली !"
पति बोले तुरत, "क्या, न वही बात यहाँ ?
दृग लाल हैं, 'विजया' यदपि, हरी घोली ॥"

(१९)

प्रेमी इसी से शम्भु जी कहाते हैं,
जो हर्ष से इसको गले लगाते हैं।
सच पूछो, जो, रिन्दो तो दीन और दुनिया-
'विजया' से बचें, बारुणी से जाते हैं ॥

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

(२०)

बनते न बम्ब, गैस, तोप, खड्ग कमान;
इतिहास में मिलता न कहीं रण का निशान;
चलता सदा 'मस्तों' का ही जग में सिक्का,
होते नहीं यदि आलसी वे सिंह-समान ॥

(२१)

'जाड़ा' सिकुड़ के दूर से करता है जुहार;
'गरमी' के छूट-चलती पसीने की धार !
'ऋतुराज' ही 'रतिराज' औ 'रसराज' के सङ्ग
आते यहाँ, सुन काली-मिर्च का सीत्कार ॥

(२२)

अधरों से रस को पीते ही सुधि भूलते हैं;
झोंका ले नभ-पताल का, अति फूलते हैं।
करते, यों, 'मस्त-लोग' नित्य मन को हरा,
जब झूले पै 'हरियाली' के सँग झूलते हैं ॥

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

(२३)

बोतल की न मस्तों ने मुसीबत पाली,
अण्टी में मसाला है, ओक है प्याली।
स्वच्छन्द हो, जग-वाटिका में करते विहार,
सँग में लिये 'हरियाली' वो 'विजया'-आली॥

(२४)

लोटे से तेरे, लग-रहा 'अलमस्त' का ओक,
बे-लाग पिलाये-जा, न टुक बीच में टोक।
रक्खेगी तुझे मस्त, 'मस्त' की आशीष—
कर प्रेम से सन्तुष्ट आज, हाथ न रोक॥

(२५)

'मस्तों' की है अलबेली, निराली वह चाल,
कवियों की न हिम्मत, कि लिखें उसका हाल।
थे हंस पंख-युत, जो उसे लख, गये-उड़,
बिन-पंख के हाथी ने दिये दाँत निकाल॥

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

(२६)

मन-मौजियों ने शास्त्र लिये सैकड़ों 'छान';
करली 'घुटन्त' धर्म-पुस्तकों की महान।
निकला यही 'निचोड़', जिसे पी गये घोल,
'भगवान का घर ध्यान,करले भङ्ग का पान ॥'

(२७)

अरि-उर में, है छिद्ता बदाम का छिलका;
खल के करै खटका सदा 'खटका' सिल का,
पी भङ्ग 'मस्त' भङ्ग-करैं दुष्ट का मान,
ले-कर स-मोद स्वाद 'स्याह-फ़िलफ़िल' का ॥

(२८)

काली है सुघर भी न दीख-पड़ती है,
है किन्तु, चरपरी, सदा अकड़ती है!
करते हैं बड़े वीर भी 'हा-हा सी-सी'
यह काली-मिर्च जब गला।पकड़ती है ॥

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

(२६)

अनुमान है, पी-बैठे भङ्ग कवि-सज्जन,
भिड़ते जो "नायिकाओं"से, तज मस्तों के गन।
इन मद से झुकी आँखों के डोरों ने, लखो
कितनों के शिर झुकाये ! कितने बाँधे मन !!

(३०)

घोड़े-सा युवक-दल हुआ नाजुक ये तमाम,
पड़, मूली के पत्ते पै सुम, हो जिसको जुकाम !
कैसे पचैगी भङ्ग, कहो, उसका भला ?
कर-सकता है गर्मी जिसे आधा ही बदाम !!

(३१)

आकाश में पूनों के चन्द्र को लखकर,
'शशि है कलङ्क युक्त' कह-उठे कविवर।
चट, बोले 'मस्त', "यह तो 'भोले बाबा' की-
घोंटी-हुई, चाँदी की गोल सिल है सुघर ।।"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

(३२)

विजया के पान का है सभी को अधिकार,
हो द्विज ही, या कि शूद्र, नागरिक या गँवार।
लोटे को भराओ, या लगादो तुम ओक—
दुनिया को खुला है ये भङ्ग का दरबार ॥

(३३)

आकाश पर जो, 'मस्तजी' की दृष्टि पड़ी,
भ्रम में पड़े, शङ्का हुई उर-बीच बड़ी—
"यह छत न कहीं गिर-पड़े आकर शिर पर,
जिसमें न तो दीवार, न तख़्ता, न कड़ी !

(३४)

"क्या, विधि ने शम्भु-संग भङ्ग छानी है ?
या, बुद्धि ही उनकी हुई पुरानी है।
ऐसी गढ़ी ये छत, कि न जिसका आधार,
रुकता न जिसमें एक बूँद पानी है !"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

(३५)

छिप-छिप के 'कलारी' को लोग जाते हैं;
डर-डर के ही प्याले से मुँह लगाते हैं।
'डङ्के की चोट' जाके बग़ीची 'अलमस्त',
ललकार के, लोटे को नित चढ़ाते हैं॥

(३६)

सोटा सँभालते हैं, मचाते हुर
सज्जन की ओर ले-के, करें दुष्ट से जंग।
देते हैं डाल शत्रुओं के 'रंग में भंग',
आता है 'मस्तराम' को जब भङ्ग में रंग॥

(३७)

बूटी ये सड़ाकर न बनाई-जाती,
सज्जन-समाज ही को ये प्रायः भाती।
दुर्गन्ध, भभक का है नाम भी न यहाँ;
इसमें इलायची की महक ही आती॥

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

(३८)

करले कोई मदिरा से चाहे 'मन का धन',
है ध्यान लगाने का भंग ही साधन!
शङ्कित हों इन्द्र; लखते शम्भु तज के समाधि,
जब करते 'रँग' में, मस्त, ईश-आराधन ॥

(३९)

है लेखनी! तुझको भी भंग की सौगन्द—
लिखती जा सपाटे के संग छन्द पै छन्द।
ले रस सभी निचोड़, कि मत 'फोक' भी छोड़,
बे-रोक चली-आने दे, अर्राटे-बन्द!

(४०)

'चटका' लगा, तो 'मस्तजी' कर क्या बैठे?
हलवाई की दुकानपै चट, जा-बैठे;
रबड़ी तो, उड़ाई सो, उड़ाईही, मगर-
पत्ते को भी पापड़ समझ के खा-बैठे!

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

(४१)

'चटके' में वो आनन्द दृष्टि-आता है,
भौंरे-सा मग्ज़ मस्त हो, भन्नाता है।
फिरने, कभी, लगता है वो फिरकी के समान,
चक्कर, कभी, चकइ के तुल्य खाता है॥

(४२)

लट्टू बना के, ख़ूब घुमाया जग-बीच;
'चकई'-सा करके दे-लिये चक्कर दृग मींच।
इस प्रेम-डोर में लपेटकर अब तो-
ढीला न छोड़, मित्र! हाथ को मत खींच॥

(४३)

विजया नहीं मोरी में मुँह दिलाती है,
अपवित्र वस्तु पर न मन चलाती है।
मिष्टान्न-सा सात्त्विक-पदार्थ चखने को,
हलवाई की दुकान यह दिखाती है॥

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

(४४)

जो चाहता है देखना संसार के खेल,
तो, त्याग दे इस क्षण ही तू बोतल की झमेल!
आ-करके बग़ीची के बीच भङ्ग को पी;
जा-करके अखाड़े में नित्य डण्ड तू पेल ॥

(४५)

कूद, यों, अखाड़े में 'मस्त', बनकर 'भीम',
दिल थाम के रह-जायँ, देखलें यदि 'भीम'।
'रुस्तम' या 'हर्क्यूलीज़', न आते सम्मुख,
भरती है भङ्ग, अङ्ग में, साहस वो असीम ॥

(४६)

सरकार जो, मस्तों की मान कर 'स्कीम'
हर मुल्क में "विजयालयों" को करदे मुक़ीम।
तो, होंगे वो वैद्यों के औषधालय बन्द;
मारा-करेंगे मक्खियाँ डाक्टर व हकीम ॥

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

(४७)

मिलता है जो आनन्द भङ्ग में भारी,
क्या-जानें उसे मद्य-मांस-आहारी ?
यह 'उग्र,' 'काम'- जित् की अमर-बूटी है,
सकते न पचा इसको नीच, व्यभिचारी ॥

(४८)

हाँफ़ी से दरोग़ा थे हो रहे दुल्लड़—
आते ही, मचा-बैठे ज़ोर से हुल्लड़।
समझे वो, फटा बम्ब बग़ीची में, मगर-
फूटा था, असल में, वो भङ्ग का कुल्लड़ !!

(४९)

मन, मानें न, उनको विना 'चण्डूल' कहे,
"चण्डू", दिये की लौ से, थे पड़ पी जो रहे।
उस दृश्य की उपमा दे कौन सी भाषा ?
थे 'नौ' का अङ्क, या वो थे 'दुचश्मी-हे' ॥

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

(५०)

आ-बैठे एक 'जन्तु' नाक-भौंह सिकोड़,
'फब्ती' दी 'मस्त' जी ने तुरत उनपर छोड़।
मालुम हुआ, अहा ! थे वे उपदेशक जी—
बकने उछल-उछल के लगे, 'ताबड़-तोड़' ॥

(५१)

जनता पै ही अपना ये रौब डाटते हैं,
भोले, भले लोगों का मग्ज़ चाटते हैं।
चालाक हैं इनमें जो, वे 'अलमस्तों' से-
आँखे-बचा, कन्नें सदैव काटते हैं॥

(५२)

परवाह किसी की न 'मस्त' करते हैं,
स्वच्छन्द हो, आनन्द से विचरते हैं।
पग-पग पै, पग उठाते निराली 'धज' से—
डग-मग नहीं डग, मग में कभी धरते हैं॥

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

(५३)

सच-झूठ में बँधकर न 'मस्त' रहते हैं;
केवल विनोद में ही मोद लहते हैं।
दें हाँक 'दूनकी' उड़ाते 'बे-पर की',
लाते हैं 'दूर की'; 'पते की' कहते हैं॥

(५४)

चूकें न बात में, न मात खाते हैं;
"हाज़िर-जवाब' हैं, खरी सुनाते हैं।
आते जो यहाँ, बन के 'बीरबल' के चचा,
'रबड़ी-सी चाटते' वो चले-जाते हैं॥

(५५)

खोओ न समय, पढ़ के व्यर्थ-के अख़बार—
आ-जाओ बग़ीची में, तज के सोच-विचार।
त्रैलोक्य के "रूटर" का यही दफ़्तर है,
बैठे यहाँ नारद के बीसियों अवतार॥

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

(५६)

पी भङ्ग, पुजारी, ले आरती, घण्टाल,
ऐसे पिले, कि निशि से किया प्रातःकाल।
'धुन' बँध गई—सोये न खुद, न "ठाकुरजी"
बिल्ली ने किया साफ़ उधर 'भोग' का थाल ॥

(५७)

कुछ-कुछ जो आये होश में पुजारी लाल,
वह भी हुआ उड़ञ्च देख प्रातःकाल—
"ठाकुर" को सुलायें, या जगायें इस-दम" ?
दम उनका हुआ .खुश्क और हाल बे-हाल ॥

(५८)

मथुरा, जो कृष्ण की है जन्म-भू अभिराम,
करती जिसे पवित्र है यमुना अविराम,
बसते हैं 'भङ्ग'-भक्त मस्त-लोग जहाँ,
किसने नशे में रक्खा उसका 'मधुपुरी' नाम ?

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

(५९)

शिव-शिव ! बड़ी कर-बैठे भूल 'मौजीराम',
मथुरा तो मनाती वसन्त है अविराम।
जीवन-प्रदा छनती सुधा-सी भङ्ग जहाँ,
रक्खा है चतुर ने ही उसका 'मधुपुरी' नाम ॥

(६०)

कल, जा-रहे थे झूमते-"मौजी-दद्दू",
'विजया' के 'रङ्ग' में बने-हुए "मद्दू"।
चट, उनकी सुघर तोंद पै (होने को निसार)
काछी के डले में से, जा-पड़ा क़द्दू ॥

(६१)

उठ-उठ के, बड़े भोर, 'मस्त' के ढोटा,
कन्धे पै डाल साफ़ी, लँगोटा, लोटा।
'तानें' उड़ाते, झूमते, अर्राते-हुए,
खटकाते बग़ीची के द्वार पर सोटा।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

(६२)

चिन्ताओं से जलता न कभी जिनका मन,
लख-पड़ता बुढ़ापे में भी जिनको यौवन।
होकर गृहस्थ भी, जो नित रहें स्वच्छन्द,
जगती में धन्य-धन्य है उनका जीवन!

(६३)

मुर्ग़े ने उधर बाँग दी मुल्ले ने 'अज़ान',
'विजया' के 'मन्त्र' बोले, इधर 'भङ्गड़ी-ज्वान'।
पीकर यों बड़े-भोर ही "कागावासी",
दिन-भर को 'मस्त' मनमें भरैं मोद महान॥

(६४)

ली छींक ज़ोर से, दिये धीरे से मठार,
फिर तोंद पै, कर फेर, ली अर्रा के डकार
पीछे डटे थे एक स्वयं-भू 'लीडर'—
बिन-सोये, बे, बर्रा-पड़े, 'इन्सल्ट' विचार॥

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

(६५)

"क्या हो गया ? यदि इस 'चुनाव' में गये-हार—
करते तुम्हें आगे को अभी से हुशियार !
'कौन्सिल' में पहुँच, इन जमात-ख़ानों को,
दिलवायेंगे सरकार से 'न्यूइसेंन्स' क़रार ॥"

(६६)

सुन-लो ये ध्यान से, बयान जैसा है,
फिर, लेना-जान, 'मद्य-पान ऐसा है'।
मोरी में पड़े, पूछते हज़रत थे स्वयं,
"कहिये, जनाब का मिज़ाज कैसा है ?"

(६७)

देती है, भङ्ग, मग्ज़ के कूड़े को बुहार;
करती है तन के, साफ़ ये 'कोठी-कोठार'।
यह गिर-पड़ी 'धन्वन्तरी' के झोले से,
कलि-काल में, करने को विश्व का उपकार ॥

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

(६८)

पटती है किसी से, किसी से ठनती है,
बनती है किसी से किसी से तनती है।
'मस्तों' का बग़ीची में नित्य का यह काम,
'घुटती' है किसी से, किसी से 'छनती' है॥

(६९)

'दाऊ-दयाल'! देव! हे व्रज के राजा!
जो, भङ्ग-पिये, तो तू, बस, यहीं आजा—
विजये! तेरा करते हैं 'मस्त' आवाहन!
नव-रङ्ग-सङ्ग, अङ्ग-अङ्ग में छा-जा॥

(७०)

तड़के ही, तन न तोड़, लेके अँगड़ाई,
मत ले तू, मुँह को फाड़-फाड़, जमुहाई!
न्योंता दरिद्रता को न दे, रे मतिमन्द!
चल, हाथ-मुँह को धो के, घोंट ठण्डाई॥

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

(७१)

बादामों को रक्खा-हुआ लख कर सिलपर,
बोले यों "दड़े-बाज़" से उनके सहचर—
"बारह 'बदाम' के हैं; सात हैं 'सिल' के ॥
उन्नीस का जँचता, है, 'दड़ा' यों जुड़कर" ॥

(७२)

चट, बोले 'दड़ेबाज़', "न मारो काँटा—
बाबा ने दिया आज गाल पर चाँटा।
'चाँटे' के हुए चार; 'गाल' के ग्यारह,
पन्द्रह का 'दड़ा' यों रमूज़ से छाँटा ॥"

(७३)

यह 'मस्त' जी ने देख के जूझा-जूझी,
दी "दड़े-बाज़" के चपत बिना-बूझी!
"लो, चार चपत के, करो तुम भी उन्नीस"—
मित्रो! कहो सच, कैसी दूर की सूझी? ॥

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

(७४)

मौजी-गुरू का है वो निराला बाना;
फ़ैशन का, जिसे देखके, मरता नाना !
जाती हैं 'तकल्लुफ़' की टूट चारों टाँग,
होता शुरू 'अदा' को हिचकियाँ आना ॥

(७५)

'नेताजी' ! एक घूँट लो, तज सोच-विचार—
चुप होगे न लैक्चर में चार दिन तक यार !
श्रोता सभी भागेंगे छोड़कर मैदान,
जावेगें सभापति जी दुम दबा के सिधार ॥

(७६)

करते-हुए मदिरा पै वाक्य-शर-बौछार,
मत 'भङ्ग' पै कर डालना, नेताजी ! प्रहार ।
धन देश का हरती है विदेशी मदिरा,
करती है भङ्ग शुद्ध 'स्वदेशी' का प्रचार ॥

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

(७७)

सड़ता 'सड़ी' मदिरा से, धर्म और आचार,
खिंच-जाता उस 'खिंची'-हुई से देहका सार।
भभकाता है 'भभका' दिमाग़ और दिल को,
असुरा है वो—समझो 'सुरा' उसे मत, यार!

(७८)

'अलमस्त' खिलौना हैं ज़माने के लिये,
पीते हैं भङ्ग, रङ्ग जमाने के लिये।
देते हँसाइयों से ये खल-दल को रुला,
गाते "रुबाइयाँ" हैं हँसाने के लिये॥

(७९)

पीकर ये "सिद्धि" सिद्ध हो-गई बानी—
लो कोश, व्याकरण की मार-दी नानी।
हिन्दी भी है, उर्दू भी है, अँग्रेज़ी भी,
सब ही की करी घोल-घाल 'रस-घानी'॥

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

(८०)

शिक्षा निकालने में कुछ तो जा-अटके,
'अन्योक्ति' समझ इनको, कुछ वृथा भटके।
लटके-रहे भाषा में कुछ समालोचक,
'मौजी-गुरू' के सुन, ये भङ्ग के 'लटके'॥

(८१)

सित प्रेम को जो 'राग' से करते काला,
ईश्वर को बनाते हैं जो "साक़ी-बाला,"
उनकी विचित्र मति, है 'म्यूज़ियम' के योग्य,
अध्यात्म-सुधा में जो घोलते 'हाला'॥

(८२)

क्या, कढ़-गया हिन्दी का, मित्र ! देवाला ?
था, पड़-गया 'उपमा' के कोष पर ताला !
ला-सकती क्या, न भङ्ग दृगों में लाली ?
लाये हो, जो 'फ़ारस' से हिन्द में 'हाला'॥

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

(८३)

किस 'रँग' में आज आई है 'साक़ी-बाला' ?
'हाला' की जगह लाई है विजया आला।
'साग़र' की है बजाय, वो 'गङ्गा सागर'—
मधु-शाला से अब हो गई विजया-शाला ॥

(८४)

अचरज का न 'रिन्दों' से कुछ ठिकाना रहा—
'साक़ी' का न पहला वो, आज बाना रहा।
क्या रहती "सुराही" जो 'सुरा' ही न रही !
लोटा ये रहा—अब न वो "पैमाना" रहा ॥

(८५)

ऐसी है 'राम-बाण' ये 'विजया' की दवा,
'काफ़ूर' जिससे होती है मदिरा वबा।
कर-देती है 'गन्दी-गली' की गन्ध को दूर,
शीतल, सुगन्ध, मन्द,'वाटिका' की हवा ॥

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

(८६)

'मुँह-आई' न रोकें ! न मुँह छिपाते हैं,
मुँह-देखी 'मस्त' मुँह पै भी न लाते हैं।
करते हैं 'जी-हुजूर' दूर से डण्डौत,
मुँह-लगते हैं यदि वे, तो 'मुँह-की' खाते हैं !!

(८७)

'अलमस्त' जी जब 'गहरी' चढ़ा-लेते हैं,
विधि के नियम भी, तब वो भुला-देते हैं।
मरु-भूमि में जाकर के लगाते गोते,
आकाश में पत्थर की नाव खेते हैं !!

(८८)

दी-छेड़ 'मस्त जी' ने वो "सारङ्ग-धमार"
साज़िन्दे चतुर जिसके 'सङ्ग' में गये-हार !
बन-आये 'कलावन्त' जो 'छायावादी',
उफ़ ! उनकी तो 'वीणा' के टूट ही गये तार !

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

(८९)

करते हैं 'आर्य' लाल-ध्वजा का गुण-गान,
देते हरे झण्डे पै 'यवन'-जन निज जान।
होकर 'हरी', 'नयनों' को 'लाल' करने से,
'विजया' बनी दोनों की एकता का निशान ॥

(९०)

अ-स्वर्ग्य हुआ, पहिले ही, पीकर 'हाला'
अब, बन 'त्रिशंकु', जाये किधर 'मतवाला'?
गङ्गा ने किया बन्द नरक का द्वारा,
भङ्गा ने 'कलारी' पै जड़-दिया ताला ॥

(९१)

'विजया' भी, मित्र ! करती है कामिल ही कमाल !
होकर 'हरी' मृग-नयनी ! के करती दृग लाल !
चितवन रँगीली, रस-भरी-द्वारा ये पुनः,
करती हरा प्रेमी के चित्त को तत्काल ॥

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

(६२)

नृप हो कोई, अथवा हो कोई भिखमङ्गा,
रोगी हो कोई, चाहे कोई हो चङ्गा।
आर्थिक या स्वास्थ्य-लाभ-दृष्टि से देखो—
सब ही को सुलभ और सुखद हैं भङ्गा॥

(६३)

गङ्गासी है भङ्गा "तरङ्गिणी"-न्यारी,
छवि-देती है 'हिम-शैल" पै उसकी क्यारी।
गङ्गा उमा, दोनों की, यों, समता रखकर,
वह क्यों न हो, वह क्यों न हो शिव को प्यारी॥

(६४)

मधु-प्याले न तुझ पर ये करें-रीते हैं!
केवल ये तेरी 'प्रेम-'भङ्ग' पीते हैं।'
'मरते हों' जो तुझ पर, तू उन्हें मरने-दे,
'मौजी' तो तुझे देख-देख जीते हैं॥

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

(६५)

वह भङ्ग, आज, तूने पिलाई, प्यारे ।
त्रैलोक्य के 'रँग' पल में दिखाये सारे ।
चूके तनिक ही; वरना, तेरी भेंट को 'मस्त'-
ला-धरते तोड़ आसमान के तारे ॥

(९६)

उठते हैं 'मस्तजी' के मन में वो-वो विचार,
'कर-डालें' तुझ पै, इस घड़ी, क्या-क्या न निसार !
दे-दें इनाम, या तो, आज 'ताजमहल',
या, कर-दें तेरे नाम 'चीन की दीवार'' ॥

(९७)

गोटे की है टोपी सफेद मूँछों पर,
आँखों में है सुरमा, तो कान में है इत्तर ।
"दद्दूजी" चले-आ रहे हैं—हट जाना !
मिर्ज़ाहुरी सोटा लिये हाथों में सुघर ॥

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

(९८)

चाहे, तो धतूरे में मिली इनको खिला,
औटा-हुआ ताँबा भी शौक़ से तू मिला।
करदे भले ही, सिल पै 'संखिया की लकीर,'
"दद्दू" नहीं 'नाहीं' पढ़े–कैसी भी पिला॥

(९९)

जब, "रङ्ग" में अपने ये, तनिक आयेंगे,
"तानें" रँगीली तब तुझे सुनायेंगे।
धायेंगे 'गिरि' से शिव, 'छन्नी-छन्नाई' छोड़,
ताण्डव ये बग़ीची में जब दिखायेंगे॥

(१००)

'मस्तों' की है आशीष ये, आनन्द के सङ्ग,
"मस्ती" तेरी लाती-रहे नित-नित नये रङ्ग।
इस तेरी 'वाटिका' में रहे नित्य-बसन्त,
बजती-रहैं सिल-लोढ़ियाँ, घुटती-रहै भङ्ग॥

× × ×

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

सुनकर ये, मित्र ! आप न होना हैरान,
"करता नहीं 'यह दास' कभी भङ्ग का पान।"
त्रुटियाँ, जो निकालो, तो तनिक पहले ही-
कर-देखना अनुभव ये, स्वयं भङ्ग को छान॥

Sri Pratap Singh
Library
Srinagar.

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

'विजया-वाटिका'

(प्रथम संस्करण) पर प्राप्त कुछ सम्मतियाँ—

१—राष्ट्र-कवि श्री मैथिलीशरण गुप्त (एम० पी०)—

रचना बड़ी विनोदपूर्ण जान पड़ती है। कहते हैं, सच्ची का रंग रूखा होता है। आपने सत्य को सरस बना दिया। बधाई। कार्त्तिक शुक्ला २ सं० १९९३।

२—औपन्यासिक सम्राट् श्री बाबू वृन्दावनलाल वर्मा—

विजया-वाटिका बहुत ही मनोरंजक कृति है। विजया-वाटिका में सुगन्धि है, रस है, रंग है, तरंग और उमंग है, चोखा व्यंग, और मन-मतंग को कान पकड़ कर उठाने बिठलाने वाला बड़ा मज़ेदार और सुरुचिपूर्ण हुड़दंग भी है। २७-५-५४।

३—सम्पादक प्रवर हास्यरसाचार्य्य श्री पं० हरिशंकर शर्म्मा—

किसी की भङ्ग में मस्ती, तेरे बयान में है।
किसी की आँख में जादू, तेरी ज़बान में है॥

पत्तियों की मादकता को तो सब जानते हैं, पर पंक्तियों से नशा इसी वाटिका में आता है।

४—सम्पादकाचार्य श्री पं० बनारसीदास चतुर्वेदी (एम०पी०)—

मुझे वह बहुत पसन्द आई थी। १३--६-३८।

५—'सरस्वती' के यशस्वी सम्पादक श्री पं० श्री नारायणजी चतुर्वेदी (एम० ए०)—

कवि ने चौबों के इस 'राष्ट्रीय पेय' का वर्णन बड़े सुन्दर ढंग से किया है। भाषा में सौष्ठव है, गति है और माधुर्य है। गम्भीर विचारों के साथ-साथ चौबे-सुलभ और विजया के अनुरूप हास्य और लोच भी है।""इस कविता में शिक्षा भी है और निर्दोष मनोविनोद भ ी।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

प्रकाशित हो गया ! प्रकाशित हो गया !!

पं० हृषीकेश चतुर्वेदीकृत

श्री रामकृष्ण-काव्य

'दोनों ओर से' पढ़ी-जाने वाली रचना

(द्वितीय संस्करण)—मूल्य ।।।)

श्रीराम-पक्ष (सीधा पढ़ने) पर—

रे बबा ! तन मान नाहक,
सार 'रामु' मना न टेरय ?
हीय में यहि हेर तारक,
कीसु-ईसुहि, दास हो, यज ।

श्रीकृष्ण-पक्ष (ऊपर की पंक्तियाँ उलटी पढ़ने पर)—

कहना न मानत, बावरे !
य रटे न नाम मुरार-सा !
'करता' रहे हिय में यही—
जय हो सदाहि सु-ईसु की !

सम्मतियाँ--

१—राष्ट्रकवि श्री मैथिलीशरणजी गुप्त (एम० पी०)—

बड़ा परिश्रम किया आपने । निस्सन्देह आपका बुद्धि-विलास कौतूहलपूर्ण है । ९—२—४४ ।

२—स्व०महामहोपाध्याय श्री०डॉ०गौरीशंकर हीराचन्द ओझा—

काव्य चमत्कृति आश्चर्यजनक है । इस अभूत-पूर्व सफलता पर चतुर्वेदीजी को हार्दिक आशीर्वाद एवं बधाई है । २५--३--४४

३—हिन्दी-संसार के सुप्रसिद्ध विद्वान् श्री० पं० किशोरीदासजी वाजपेयी शास्त्री—

यह विलोम काव्य हिन्दी में अपने ढंग की एक दम अनूठी चीजें हैं । मैंने हिन्दी में किसी दूसरे व्यक्ति का ऐसा काम नहीं देखा ।

—(करवा चौथ सं० २०१२)

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

प्रकाशित, प्रकाशित, प्रकाशित !

पं० हृषीकेश चतुर्वेदी-रचित

"श्रीकृष्ण-ताण्डव-स्तोत्रम्"

"श्री शिव-ताण्डव-स्तोत्रम्" की संस्कृत में ही रचित

अपूर्व अनुपम अनुकृति

(हिन्दी के भावार्थ-सहित, सचित्र)

लसद्दिनेन्द्र-नन्दिनी-चलत्तरंग-वल्लरी-
क्वणत्प्रतीर-राजिते, कला-कलाप-मञ्जुले ।
'वृषांशुमालि-बालिका'-व्रजांगणा-गणान्विते,
मयूर-चन्द्रिका-धरे रतिः प्रतिक्षणं, मम ॥ २ ॥

मूल्य =)

× × × ×

अति शीघ्र हिन्दी लिखना सिखाने वाली पुस्तिका

"संयुक्त-वर्ण-विज्ञान"

प्रत्येक 'वर्ग' के पहले चार अक्षरों में--

द्वितीय तथा चतुर्थ अक्षर दुगुने न लिखे जाकर द्वितीय प्रथम को तथा चतुर्थ तृतीय को अपने अग्रभाग में लेकर संयुक्त होता है; जैसे मक्खी, बग्घी ।

मूल्य =)

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

पं० हृषीकेश चतुर्वेदी-द्वारा रचित

"ब्रजभाषा" के 'पद', 'तान', 'कवित्त', 'सवैया' आदि का
अपूर्व संग्रह

"ब्रज-माधुरी"

शीघ्र प्रकाशित होगा

चतुर्वेदी जी की ब्रजभाषा की कृतियों के विषय में हिन्दी-संसार
के सुप्रसिद्ध आलोचक—

डा० श्री रामविलास जी शर्म्मा

ने

१२ अगस्त १६५६ के

"साप्ताहिक हिन्दुस्तान"

में प्रकाशित-

"एक चमत्कारी व्यक्तित्व— पण्डित हृषीकेश चतुर्वेदी"

शीर्षक लेख में लिखा है—

"..................चौबे जी मँजी-हुई ब्रजभाषा लिखते हैं। ....'रत्नाकर' के बाद ऐसी सुन्दर ब्रजभाषा किसी ने नहीं लिखी। ....सब से बड़ा चमत्कार सरसता है जो, उनके ब्रजभाषा के छन्दों में और लावनी खयालों में विद्यमान है।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

पुनः प्रकाशित हो रहा है—

महाकवि कालिदास-कृत "मेघदूत" के समान ही
८५०० अक्षरें-युक्त (ब्रजभाषा में) तुकान्त अनुवाद—

"समश्लोकी मेघदूत"

(द्वितीय संस्करण)

[अनुवादक—पं० हृषीकेश चतुर्वेदी]

ता-उत्कण्ठा-प्रद जलद के जाइ ज्यों-त्यों समत्त,
आँसू-रोंकें चिर तक रह्यौ सोच में मौन यक्ष।
जौपै मेघें लखि सुखित हू सुक्ख कौं भूलि-जावें
कैसे प्रेमी गर-मिलन के दूरि ह्वै चैन पावें ॥२॥

प्रथम संस्करण पर प्राप्त कुछ सम्मतियाँ—

१—'सरस्वती'—

समश्लोकी पद्यानुवाद करना कठिन काम है। परन्तु चतुर्वेदीजी ने इस काम के करने में सफलता प्राप्त की है।—(अक्टूबर १९३३)

२—'सुधा'—

मन्दाक्रान्ता व्रजभाषा का अपना छन्द नहीं पर तो भी लेखक ने एक अत्यन्त कठिन कार्य को लेकर उसमें यथासम्भव सफलता प्राप्त की है।........यह अनुवाद सरस और सुबोध है।

—(आषाढ़ तुलसी सं० ३१४)

३—'सुकवि—

चतुर्वेदी जी ने यह कठिन कार्य बड़े परिश्रम से किया है........ आपका प्रयत्न स्तुत्य है। —(जून ३३)

४—लीडर—

The translation has been a successful one.... Samashloki translation is a difficult task but the writer has succeeded in it........Some of the stanzas are so full of feeling that they are quotable........The work is creditable and will prove interesting to students and lovers of literature. (26-11-34)

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

शीघ्र प्रकाशित होने वाली

यमक-श्लेष मय पद्य-रचना

"श्रीरामकृष्णायन"

(भावार्थ-व्याख्यादि-सहित)

[रचयिता—पं० हृषीकेश चतुर्वेदी]

लखि सुघर मन्थरा-चाल मोहित राय भये;
लाग्यौ लखि बिजननि दाव, हरि सब शान्त किये।
वन पाइ प्रलम्ब बिदाहि, कौसल सों निकरे;
तिन अगम तपस्वी रूप बनि तन चीर धरे॥

भावार्थ—(श्रीराम पक्ष)—अच्छे घराने में (सु+घर) अथवा अच्छे प्रकार से गढ़ी हुई (सुघर=सुगढ़) मन्थरा की चाल देखकर श्री दशरथराय मूर्छित हो गये। श्रीराम ने विमाता (वि+जननि) कैकेयी का दाव लगा देखकर सबको शान्त किया। वे वन के लिये बहुत लम्बी (प्रलम्ब) विदा को पाकर अयोध्या से निकले। उन्होंने अगम्य तपस्वी बनकर शरीर पर बल्कल वस्त्र धारण किये।

(श्रीकृष्ण पक्ष)—श्रीकृष्ण की सुघर मन्थर चाल को देखकर श्री नन्दराय अति हर्षित हुए। वनों में (विजननि) दावानल लगा देखकर श्रीकृष्ण ने उसे पीकर सबको शान्त किया। वे बन में प्रलम्बासुर से बिदा पाकर अर्थात् उसे मारकर कुशलता से निकल आये। उन तपस्वी-रूप ने वृक्ष (अगम) पर व्रज वनिताओं के चीर रक्खे।

'श्रीरामकृष्णायन' के सम्बन्ध में हिन्दी-साहित्य के सुप्रसिद्ध विद्वान् आचार्य श्री किशोरीदास वाजपेयी ने लिखा है :—

"यह काव्य मैंने अपनी आँखों देखा, बड़ा ही आश्चर्य हुआ। कैसी प्रतिभा और कितना काम है।.......मैंने हिन्दी में किसी दूसरे व्यक्ति का ऐसा काम नहीं देखा।"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

'खड़ी बोली' में ८० प्रकार के छन्दों-युक्त

श्रीमद्भगवद्गीतानुवाद

शीघ्र प्रकाशित होगा—

(अनुवादक—पं० हृषीकेश चतुर्वेदी)

अनन्त-वीर्य ! आपको समोद सर्वतः सदा,
समक्ष से, परोक्ष से प्रणाम हैं अनेकधा।
समस्त विश्व में कि जो, रहे सदैव व्याप हैं
वही अपार-शक्ति-युक्त, सर्वरूप आप हैं ॥
प्रभाव आपका न जान, प्रेम या प्रसाद से,
'सखा-सखा' कि जो कहा, सखा सदैव मान के;
त्वदीय कृष्ण, यादवादि नाम या कि जो लिये,
उसी लिये, हरे! मुझे क्षमा प्रदान-कीजिये।

(अध्याय ११—श्लोक ४०-४१)

१—'सरस्वती' के यशस्वी लेखक स्वर्गीय कविवर—

पं० रामचरित उपाध्याय

ने लिखा है—

मूल का भाव सम्यक् रूप से अनुवाद में आ गया है······ मेरे विचार से पुस्तक सुन्दर और शुद्ध है।

ता० ३-१०-३२

× × × ×

पं० हृषीकेश चतुर्वेदी-कृत

'चित्र-काव्य'-सम्बन्धी अपूर्व संग्रह

'चित्र'-वैचित्र्य।

शीघ्र प्रकाशित होगा—

SPS
891.431 H 86 CH
19704

महावीर प्रेस, किनारीबाजार आगरा में छपी।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE